

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180572

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/m/8c Accession No. H/2787

Author HEER

Title Shri Vol I

This book should be returned on or before the date
last marked below.

N.D.



द्वितीय भाग

प्रकाशक
चिनगारी प्रकाशन
पो० बॉ० ७८, बाराणसी

●
तृतीय संस्करण
दो रुपया आठ आना

मुद्रक
चिनगारी प्रेस
बाराणसी

भैया 'कान्त' !

**"अब तो सम्भल एक रह गया है बस तेरी याद का
मेरा लघु उपहार करो स्वीकार असह अवसाद का ।"**

मंजिल और सफर !
मौत और जिन्दगी !
दोनों का अस्तित्व अलग-अलग फिर भी एक दूसरे के बिना अधूरे !
दोनों नदी के दो किनारों की तरह अचल, अडिग, स्थिर !
दो किनारों के बगैर नदी नहीं बह सकती तो मौत और जीवन के
बिना इन्सान की सत्ता क्या ?

इन्सान !
जो मंजिल की तरफ बढ़ता है सफर की मजबूरियों से थक कर भी,
तमाम तकलीफों को लयेडता हुआ । कोई भी बाधा उसे डरा नहीं सकती ।
और जो मौत से नहीं डरता उसे जिन्दगी क्या डरायेगी ?
पागल सँपेरा सफर पर है अभी ।
मौत के थपेड़ों को सहता, लड़खड़ाता, जिन्दगी की आखिरी साँस
सँभाले बढ़ता जा रहा है टिकोरा !

छैला—२

भयानक सैंपेरा सॉप के काट लेने पर भी डगमगाते पगों से बढ़ता जा रहा है शहर की ओर । अपनी मञ्जिल की तरफ ।

मण्डिधर का दाढ़क विष धीरे-धीरे घुल रहा है उसकी छोटी पहाड़ी-सी दीर्घाकार काया में ।

अपनी धुन का पक्का मदारी जहर की ज्वाला को पागलपन और प्रतिहिंसा की अग्नि में स्वाहा कर रहा है ।

उसके कदम डगमगा रहे हैं । साँस मौत के पास खिसक जाना चाहती है । जिन्दगी सिमटी जा रही है उसकी ।

मगर टिकोरा है जिद पर अड़ा, अपने पाँव पर खड़ा ।

मरने से पहले वह अपने ही मन की करना चाहता है—मनमानी । एक साध लिये, बाधाओं की आँधी से लड़ता बढ़ता जा रहा है वह ।

और वह साध है परदेसी की मौत !

परदेसी की जिन्दगी तबाह कर देगी वह साध !

परदेसी को मौत की जिन्दगी देगा टिकोरा !

मैना के परदेसी को मैना के सामने ही जलील करेगा वह ।

मैना !

कहाँ है मैना ?

किधर उड़ गई मैना ?

खँडहर से तो मैना को लेकर चला था टिकोरा ।

तो मैना उड़ गई, मगर कहाँ, किधर ?

टिकोरा परदेसी के घर के बिलकुल पास पहुँच गया है । ज्यों-ज्यों वह अपने बैरी परदेसी के पास पहुँचता जा रहा है, त्यों-त्यों उसके अन्तर की आग लपटें उगलती जा रही है । उसके पंखे खुल रहे हैं, बँध रहे हैं, मारे क्रोधावेग एवं आवेश के ।

छैला—२

उसकी भवें तनती जा रही हैं, पाँव बढ़ते जा रहे हैं । लाल-लाल आँखें परदेसी को खोज रही हैं ।

आज नहीं बच सकता मैना का परदेसी !

उसने मैना को लूटा, टिकोरा को मिटा दिया और खुद हँसेगा ? नहीं !

आज टिकोरा उसके सारे पापों का बदला लेकर ही छोड़ेगा ।

बेचारा, बेबस परदेसी !

उसे क्या पता है कि थोड़ी ही देर बाद दुनिया से उसका जनाजा उठ जायगा, वह तो बीमारी की हालत विक्षिप्त पड़ा है गुदगुदे गद्दे पर। कविता उसके पास बैठी है किन्तु मैना है उसकी खोयी-खोयी आँखों में ।

पागल प्रेमी मैना को पलकों की सेज पर आमन्त्रित कर रहा है ।

किन्तु मैना !

उसकी साँस की [मैना तो पहले ही उड़ चुकी थी । अब तो शरीर का पिंजरा भी क्षत-विक्षत हो गया ।

अचल की विचित्र बीमारी से सभी घबड़ा उठे हैं । डाक्टर दास रोज इंजेक्शन देकर उसके शरीर को छलनी बना रहे हैं । फायदे का कोई चिह्न कुँवर के चेहरे पर नहीं खिंच रहा है ।

रानी माँ कुछ ही स्वस्थ हो पायी हैं । एक तो बूढ़ा शरीर और साथ में गठिया के कीड़े—उस पर बेटे की बीमारी की चिन्ता ।

उफ् !

माता का ममतामय हृदय चोट पर चोट खाकर भी चुप है । देखता चल रहा है भाग्य के खेल को ।

अब तो कुँवर अचल नारायण के आखिरी दिन हैं ।

कुछ और बिन्दगी की साँस ले ले फिर तो टिकोरा आयेगा और... और !

और सबेरा हो गया । प्राची के सुनहरे अधरों ने ऊषा के सिंदूरी गालों पर चुम्बन की मुहर लगा दी । मादक आलिंगन पाकर उसका मन विभोर हो उठा । उसके कपोल लाल-लाल हो उठे मारे खुशी के । अपनी विजय पर धीरे से खिलखिला उठी ताकि कोई कुछ देख न ले, कुछ सुन न ले ।

दोनों की मधुर खिलखिलाहट सुन कर प्रकृति ने अपनी आँखें खोल दी ।

उसने देखा—

दो प्रेमियों का मधुर मिलन ।

चारों ओर विचित्र समाँ बँधा है । भोर की विभोर हवा बह रही है ।

पहाड़ी प्रदेश के आँचल में बसा महुवारी ग्राम भी जाग गया है ।

सूरज की पहली किरणें छोटे से खुशनुमा गाँव के चप्पे-चप्पे पर अपनी रोशनी भर रही है ।

झैला—२

रात भर नरम-नरम दूब की सेज पर सोयी ओस की बूँदे चमक कर जाग पड़ी हैं। निगाहें उठा कर देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि महुवारी ग्राम के खेतों में मोती ही उगा करते हैं।

घास-फूस में सँवारा महुवारी बड़ा ही मनोहारी है।

रात भर नींद को चादर तान कर सोने वाले यहाँ के किसान जाग पड़े हैं अब। कोई कन्धे पर हल लेकर खेतों की ओर, कोई गायों को हाकता बातें करता जंगल की ओर जा रहा है।

यहाँ के वासिन्दे अपने ही में सीमित, अपनी ही मेहनत से तृप्त और अपने अभावों में भी अलमस्त। किसी से किसी का बैर नहीं। दगाबाबी फरेब और धोखे का 'साया' यहाँ नहीं। और न वैभव का विलासमय प्रदर्शन। यहाँ तो प्रेम और मानवता की दीवार खड़ी है, जिसके आगे दुनिया की सभी वस्तु तुच्छ !

गाँव के आखिरी छोर पर पश्चिम की ओर एक शिवाला। शिवाले के बगल ही में ईंट और पत्थरों के जोड़ पर खड़ा महलनुमा मकान। जिसे लोग हवेली कहकर सम्बोधित करते हैं।

हवेली में रहता है, ठाकुर सजीवनसिंह का बेटा सजल नारायण जो गाँव का राजा है।

गाँव वालों की निगाह में अपने राजा के प्रति अत्यधिक आदर और मान है। महुवारी ग्राम के जर्रे-जर्रे में ठाकुर सजल नारायण का उदार हृदय अंकित है।

सजल !

तीस-पैंतिस का जवान ! रोबीला चेहरा, चुस्त और सुडौल अंगों में अजीब आकर्षण। उसकी आँखों का संकेत ही कानून है। किसी की ओर आँखें उठा कर देख दे तो क्या मजाल की कोई ना कर दे।

अपने दिवंगत पिता की भाँति ही शिकार का शौकीन ! फुरसत के

छैला—२

बन्दूक को ही प्यार किया करता है। पत्नी बेचारी तो तभी मुख मोड़ कर चली गई, जब उसके हाथों की मेंहदी भी नहीं छूटी थी। फिरसे दूसरी शादी करने का शौक नहीं किया उसने। छोटा भाई या वह भी जंगलमें खो गया। साथ है सिर्फ छोटी बहन रचना। बड़ा खयाल रखती है उसका।

सुबह हो गई। हवेली का पुराने ढंग का सिंह दरवाजा खुल गया है। अपने राजा का जुहार करने सभी दूट पड़े हैं। रात के पहरे के लठैत आँखों में डगमगाती नींद लिये अपने-अपने घर चले गये तो उनके स्थान पर दूसरे तैनात हो गये हैं।

रात में शान्त रहने वाला गाँव दिन के उजाले में चुस्त और तेज प्रतीत हो रहा है। सभी अपना आलस्य त्याग कर सक्रिय हो उठे हैं।

छोटे और ब्या बड़े, सुबह किसी का मुँह देखने के पहले, आँखें मलते हुते शिव जी का दर्शन करने मन्दिर पर इस तरह दूट पड़े हैं, जैसे लोग किसी अपरिचित और अनोखी चीज को पहली बार देखने के लिये उमड़ पड़ते हैं।

शिव-लिंग के पास ही मन्दिर के पुजारी महोदय नेत्र बन्द किये, दाहिने हाथ से घंटे को हिलाकर निनादिन करते हुये 'बम-बम भोले' का मन्त्रोच्चार कर रहे हैं।

और बाहर !

भद्रावनत ग्रामीण अवघड़दानी के चबूतरे पर माथा टेक अपने हृदयोद्गार भगवान के चरणों पर अर्पित कर रहे हैं।

तो हर तरह से खुशहाल है ठाकुर सजल नारायण का महुवारी ग्राम अपने सरल एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व के दर्शन देखकर वह अपने खास कमरे में चला गया है। दोनों हाथों को पीठ की ओर बाँधे दीवार पर टेंगे शेर, चीता रीछ, अजगर और और भी अन्य जंगली जानवरों के चमड़े को निहार रहा है।

खैला—२

सामने साफ सुथरी गद्दी लगी है, दो मसनद दीवार से उटंगे हैं । गद्दी के दोनों तरफ शेरों की खालों में घास-फूस भरकर सजीव कर दिया गया है ।

कोई अनजाने वहाँ पहुँच जाय तो डर के मारे नानी हो मर जाय । लगता है अब उछला, अब गुराया ।

कोने में खड़ी हैं दो बन्दूकें ।

सजल ने एक को उठा लिया । आकर गद्दी पर बैठ गया । और करने लगा बन्दूक की सफाई । उसकी नली में आँखें डालकर देख ही रहा था कि किसी ने आकर पुकारा—

“भैया !”

स्वर था मादक, आकर्षक और सजीव ठीक कोयल की भौंति ।

तो क्या ठाकुर साहब ने घर में कोयल भी पाल रखी है ?

“क्या है ?” यह था सजल ।

आँखें बन्दूक की नली से हटकर आवाज की ओर आकर रुक गई । देखा—सामने थी रचना ! कोयल-सी वाणी और गुलाब-सी देह लिये ।

“बोल न....कहना क्या चाहती है तू” स्नेहमय स्वर था ।

“कहा मानोगे तो नहीं ही जाने दो भैया...तुमसे कहना न कहना दोनों बराबर...पानी पर लकीर खींचने से लाभ ही क्या !” वह भीतर चली गई ।

“रचना !...सुन तो !” कहता हुआ सजल उठ खड़ा हुआ ।

सजल की पुकार रचना को रोक नहीं सकी ।

सजल की आवाज की ताकत रचना जैसी नारी पर आदेश नहीं चला सकी । अगर रचना की जगह गाँव के खर-पात को उसकी आशा मिली होती तो वह हिल भी नहीं सकता ।

किन्तु रचना तो नारी थी ।

छैला—२

जिसके सारस्व और सहिष्णुता के समस्त दुनिया का सारा वैभव सारी शक्ति सम्मान के साथ नत हो जाती है ।

तो फिर सजल जैसा व्यक्ति कैसे नहीं झुकता । झुक ही पड़ा ।

खम्भे के सहारे खड़ी रचना के समीप गया वह । गौर से देखा, बड़े गौर से । रचना का सौभाग्य मुख-मण्डल उदास था ।

“नाराज हो गई रचना ?”

“अपनी से कोई नाराज नहीं होता भैया !...तुमसे रूठकर किसकी शरण में जाऊँगी । माँ भी नहीं की उसकी गोद में जाऊँ, आँसू बहाकर शान्ति पा लूँ... कहते-कहते रुक गई वह ।

सजल को लगा जैसे हिचकियों ने रचना की जबान पकड़ ली हो !

“तुम्हारी आवाज आँसू से भोग उठी है रचना !...अपना स्वर सम्भालो पहले...अगर मुझे रुलाना ही चाहती हो रोओ जी भरकर... मुझे कुछ नहीं कहना है ।” व्यथित होकर कहा सजल ने—“पता नहीं तीन चार महीनों से क्या हो गया है तुम्हें ।”

“मुझे कुछ नहीं हुआ है भैया !...कुछ हो गया है तुम्हारी नजरों को ही...” होठों पर फीकी हँसी लाकर बोली रचना—“रही बात रोने की...तो वह भी जान लो—दुनिया में आँसू, पीड़ा, वेदना और व्यथा—ये चीजें जब केन्द्रीभूत हुई तो नारी का निर्माण हुआ...तुम्हें घबड़ाने की जरूरत नहीं भैया !...आँसू छिपाने के लिए नारी के पास आँचल भी होता है, जो समय पर सभी के आँसू पोंछ सकता है।”

“अपनी फिलासफी अपने पास रख....शहर में कुछ दिन पढ़ क्या आयी बहस करने की लत लग गई....अच्छा अब मतलब की बात कर—क्या कह रही थी तू ?...मुझे बहुत काम करना है।”

“मतलब की बात तुम्हीं करती हो...मैं तो नहीं की....तुम बड़े मतलबी हो भैया ।”

छैला—२

“अरी रचना !...क्या बकभक लगा रखी है तूने—ऐं !....क्यों दिक कर रखी है अपने भैया को...हाय राम-हाय सीता ! यह लड़की तो न अपने चुप रहेगी न दूसरे को साँस लेने देगी...”

“आ गई नानी !...आओ, दाल-भात में मूलचन्द के बगैर सुना था...” बोली रचना बिगड़ती हुई ।

“देख रचना ! कई बार समझाया तुझे....मैं तेरी नानी नहीं, दादी हूँ दादी !...तेरे बाप की माई !...हाय राम-हाय सीता !...” कहती हुई आगन्तुक बूढ़ी धीरे से पत्थर के चबूतरे पर बैठने लगी ।

तभी—

“आक् छीं !”

छींक की सीक जब बुढ़िया के कानों में घुसी तो बैठती-बैठती उठ गई ।

“हाय राम-हाय सीता ! हर काम में टोंग अड़ाती है छोरी !... ठाकुर बेटा पकड़ ले हरामी की नाक...फिर छींकना चाहती है यह तो...”

“क्या करूँ परोसन नानी !...तुम्हें देखते ही मेरी नाक खुजलाने लगती है...आती भी तो हो आँचल में सुँघनी की पुड़िया बाँधे...बैठो न नानी !...राम-सीता की कसम नहीं छींक्कूँगी अब...”

“फिर नानी कहती है शैतान ! कई....”

“बार तो कह चुकी कि तेरी नानी नहीं, दादी हूँ दादी, तेरे बाप की माई—हाय राम-हाय सीता !...” रचना ने बीच में ही रोक कर वाक्य पूरा किया ।

स्त्री कर परोसन बुढ़िया बैठ गई ।

“तू खड़ा क्यों है बेटा !...बैठ न !”

“मैं कोई बूढ़ा थोड़े ही हूँ दादी कि कमर दुखने लगे, मुझे बसूली के लिये पहाड़पुर जाना है...” कह कर जाने लगा सचल ।

छैला—२

“सुन सजल !” परोसन ने आदेश एवं प्यार से कहा—“मत जा तू वसूली के लिये...मुन्शी कारिन्दे क्या मर गये हैं !...”

“अभी तो जी रहे हैं सभी...” हँस पड़ा सजल ।

“जी रहे हैं तो वही जायेंगे...कुत्तों को खिला-खिलाकर हाथी बना-आगे क्या ! हाय राम-हाय सीता !...लड़के की अकल भारी गई है क्या !...कुत्ते हाथी बनकर नमकहराम हो जायेंगे—समझे !...तू भूकता रह जायगा, मगर सूप जैसे कान पर जूँ भी न रेंगेगी....”

“जूँ भले न रेंगे दादी !...बन्दूक की गोली तो रेंग ही सकती है...गलती करने वाले के लिए मेरे पास कोई क्षमा नहीं...एक-एक की गरदन काट लूँगा मैं !” कहता हुआ तेजी से बाहर चला गया सजल ।

परोसन दादी बड़बड़ाती ही रह गई ।

“क्या हुआ रे !” आह सुनकर चौंक पड़ी परोसन !

“तुम्हारी नहीं सुनेंगे दादी !...भैया अपने मन के हैं—आह !....” रचना के गले से कराह निकली ।

“क्या हुआ रे !” आह सुनकर चौंक पड़ी परोसन !

“पेट जोर से दर्द कर रहा है दादी !...आश्रो घर के भीतर....” दोनों हाथ से पेट दाबे रचना पलंग पर आकर बैठ गई ।

बोली—“यह कौन-सा रोग पाल लिया तूने !...देखती हूँ जब से शहर से आई है...कभी चैन से नहीं रहती...कभी सर दर्द तो कभी पेट दर्द...हाय राम-सीता ! क्या हो गया है इस रचना को...”

रचना की पीड़ा बढ़ती जा रही थी । जल से बाहर मछली की भाँति तड़फड़ा रही थी । करवटें बदल-बदल कर आराम हासिल करना चाहती थी ।

किन्तु पेट का दर्द था कि कम होने का नाम नहीं ले रहा था ।

क्या हो गया है उसे !

छैला—२

रचना की परेशानी देखकर परोसन दादी का दिमाग भी सुन्न हो गया । कुछ सूझ ही नहीं रहा था उसे कि क्या करे क्या न करे । चेहरे पर 'हाय राम-हाय सीता, का भाव उग-मिट रहा था ।

थोड़ी देर बाद स्वस्थ हुई रचना ।

पीड़ा का ज्वर उतरा । उसके सलोने कुलबेरा के फूल की तरह चेहरे पर पसीने की बूँदें चुहचुहा आई थीं ।

“दादी, जरा पानी पिला दो ।”

रचना की आवाज सुनकर परोसन दादी का चेहरा शाम की उदासी उतार कर सवेरा जैसा खिल पड़ा ।

दौड़कर गिलास में पानी ले आयी ।

“हाय राम-हाय सीता ! मैं तो लुट गयी थी...” लम्बी साँस छोड़ती हुई बोली परोसन दादी ।

रचना ने ठंडे जल का पान किया तो उसकी बेचैनी भागी, किन्तु उसके सर का चक्कर अभी नहीं उतरा था । उसका जी मिचला रहा था ।

मिचली रोकने का प्रयत्न तो किया उसने लेकिन सफल न हो सकी ।

ओक्-ओक्, करती पनारे पर जा बैठी । एक कै हुई, बस, और फिर ज्यों-की-त्यों ।

यह घटना आज की ही नहीं, महीनों से जारी थी । अपनी इस विचित्र बीमारी को रचना हमेशा तरह देती आई है और आज भी उसने पुराना पाठ ही दोहराया ।

रचना के लिये यह बात महत्व भले ही न रखती हो । किन्तु ममता-मयी परोसन को तो एक चिन्ता ने आ जकड़ा ।

पहली बार तो देखा था परोसन दादी ने । पेट दर्द, सर दर्द तो जानती थी वह लेकिन कै की बात तो बिलकुल नई थी उसके लिए ।

छैला—२

इतने दिन से रचना सभी से अपना रोग छिपाती आ रही थी । यहाँ तक की सजल को भी अब तक नहीं बताया ।

थोड़ी देर फिर हँसने-बोलने के बाद रचना के पेट में पीड़ा अँगड़ाई लेने लगी । अधिक हँसती-बोलती है तो पता नहीं क्यों उसके पेट में बल पड़ने लगते हैं ?

जब ऐसी बात है तो क्यों हँसती है ?

क्या करे, अपनी आदत से बेवस है । अपनी उम्र के तकाजे से मजबूर ।

परोसन रचना की बेचैनी इस बार चुप देखती ही नहीं रही ! उसके बूढ़े हाथ रचना के पेट को भी सहलाने के लिए दौड़ पड़े !

और रचना !

आहँ भर रही थी ।

उसको आँखों में आंसू की बूँदे उतरा आई थीं !

वेदना के आंसू पलकों का बाँध तोड़कर उदास चेहरे के गालों पर डुलक पड़े ।

और परोसन !

रचना की पडोसिन दादी । जो हमेशा सजल और रचना पर अपनी ममता छुटाने के लिये उद्यत रहती है ।

जिसने मां के मर जाने पर रचना को अपनी बूढ़ी पलकों की सेज पर सुलाया था । जिसने दुख-सुख के पीछे अपने आराम की जिन्दगी की सांस को दम नहीं लेने दिया जिसने प्यार भरे तमाचे की चोट से तराश कर रचना जैसी प्रतिमा का निर्माण किया उसे सजाया और सँवारा ।

वही परोसन दादी !

चौक पड़ी, उसकी आँखें आश्चर्य से फैल गई ।

क्यों ?

झैला—

पता नहीं !

उसने रचना के पेट पर से अपना हाथ हटा दिया । रचना छुट-पटाती रही । उसने रचना का पेट उगार दिया ।

और जब पेट से कपड़े हट गये तो वह झुक गई । बूढ़ो आँवों की तितर-बितर रोशनी बटोर कर ध्यान से उसके पेट को निहारने लगी । कुछ देर तक निहारती रही ।

फिर धीरे से सहलाया उसने रचना के पेट को ।

अरे !

यह क्या देख रही है परोसन । रचना का पेट फूला क्यों है ? क्या है रचना के पेट में ? रह-रह कर क्यों दर्द करने लगता है ?

विचित्र-विचित्र शंकायें परोसन के मन में साँप की तरह फन उठा कर फुँफकारने लगीं । क्षण भर बाद ही शंका विश्वास में बदल गई । मन का साँप विश्वास मंत्र के तेज प्रभाव से विक्षिप्त हो गया ।

परोसन का बूढ़ा दिल धड़क उठा ।

रचना तो ऐसी नहीं थी ।

स्वप्न में भी उसे गुमान न था कि रचना अपने हीरे जैसे शरीर को मिट्टी के मोल दुनिया के बाजार में बेच देगी ।

जरूर यह पाप शहर का है ! और गाँव की स्वच्छ हवा, शीतल जल, पान करके विशाल हो गया है । जब रचना को पढ़ने भेजा जा रहा था तभी परोसन ने आपत्ति की थी । उसने शहर की गन्दगी के बारे में अपने पति से सुना था । और उसका सर भन्ना उठा था ।

शुरू से ही शहर की विरोधी रही है परोसन । इस परिवार के दो दीपकों की रोशनी को बुझा दिया शहर की विषैली हवा ने । छोटे ठाकुर सज्ज का अनुज । शहर की कोठो में ही बिगड़ कर माटी हो गया था । रामगढ़ जंगल में शिकार खेलने गया तो फिर वापस नहीं

छैला—

लौटा । रचना भी शहर के दूषित हवा से अपना सुरक्षा नहीं कर सकी । अपनी और अपने खानदान की नाक ही कटा दी ।

आज ही परोसन शहर की कोठी बेच देने की सलाह देगी ।

सोचते-बिचारते उसकी आँखों की पुतलियों की छाया में जवानी के दिन भी हँस पड़े ।

उस वक्त जवान थी परोसन । पैर जमीन पर तो पड़ने का नाम ही नहीं लेते थे ! किन्तु हाय री किस्मत ! जवानी के दिन तो आँखों में ही गुजर गये । यौवन की आग बुझ गयी तो उसने एक बच्चे की भीख भगवान से माँगी । पत्थर के भगवान को मनाती रही वह, मगर उसकी गोद विधवा की माँग की भाँति खाली ही रह गई । वह निराश हो गई अपनी किस्मत को कोसकर ।

उसकी भावनायें प्रबल होती गईं । हवेली से आना जाना रहता था उसका । उसने अपना सारा प्यार, सारी ममता एकत्र करके ठकुराइन की सन्तान को देना प्रारंभ किया । वह आती, नन्हें-मुग्गे बच्चों से घंटों खेलती रहती । उस असीम आनन्द का अनुभव होता । दिन गुजरें बच्चे अनाथ हो गये । पहले ठकुराइन चली गई, फिर ठाकुर भी । उस समय लडके तो बड़े हो चुके थे, किन्तु रचना, उस उद्यान का पहली कली थी जिसे हवा का झोंका स्पर्श भी नहीं कर पाया था । परोसन ने उसे अपने आँचल में जगह दी । रचना बढ़ने लगी उसे कुछ भी भान न हुआ ! माँ की कमी उसे खटकती ही नहीं कभी ।

रचना दिन की गेशनी, चाँद की चाँदनी, बरसात की फुहारों के बीच खिलती रही । परोसन ने उसे खानदान की इज्जत और ठाकुरों की शान के बारे में बताया ।

किन्तु—

वही रचना ।

छैला—२

अपने खानदान की मर्यादा भूल बैठी। अपने मन की शक्ति के लिए उसने सूरज से चमकते दिवंगत पुरखों के मुख में कालिख पोत दी।

दुनिया सुनेगी तो क्या कहेगी ! सजल की ओर लोग विजली की तरह उंगलियाँ उठायेंगे और वह देखता रह जायगा।

नहीं, इसके पहले को खानदान की इज्जत धूल बने, वह मसल देगा रचना को। अपना सर झुकाने के लिए रचना का सर काट लेगा वह।

परोसन के मन में आया कि सजल को सारी बातें जता दे, किन्तु जब उसने काफी गौर से सोचा तो कहना ठीक नहीं समझा।

लेकिन कब तक यह बात छिपा सकेगी वह ! दीवाल के भी तो कान होते हैं। हवा भी तो बोलती है।

मले परोसन भेट नहीं खोलेगी, पर रचना का पेट, जो दिनों दिन हिमालय के उत्तम शिखर की भाँति मस्तक उठा रहा है, वह तो खोल दी देगा।

पुरुष के बड़े से बड़े पाप पर परदा पड़ सकता है, पर नारी के तो नहीं ही।

रचना अब तक पेट दर्द से झुटपटा रहा थी।

क्या करे परोसन कुछ सोच नहीं पा रही थी।

कुछ तो करना ही पड़ेगा। उसके सिवा इस स्थिति में रचना का सहायक कोई नहीं। कितनी खतरनाक भूल कर बैठी है रचना जबानों की उमंग में !

अगर यही भूल शादी के बाद हुई होती तो परोसन फूजी न समाती। रचना की बलैया लती, उसे दुलारती, पुचकारती ! शान से पाम-पडोस में चर्चा करती !

रचना का पेट सहलाती जा रही थी परोसन दादी। आँखों में आँधेरा और बूढ़े मस्तिष्क में विचारों का तूफान लिये।

छैला—२

समय बीता । परोसन के स्निग्ध स्पर्श से रचना को राहत मिली, चैतन्य हो उठी वह । फिर वही पुराना दर्ज़ा, मिचली के बाद कै, फिर ज्यों की त्यों ।

“नानी, क्या हो गया नानी मुझे ?” रचना ने गंभीर परोसन को नानी कहकर हँसाना चाहा ।

“.....”

“नानी, बोलो न नानी मेरी !” रचना ने फिर कहा और परोसन के गले की माला बन गई ।

भला कैसे बताये परोसन कि वह कुछ दिनों में ही माँ बनने वाली है ।

“सुन रचना !...तूने भारी भूल कर दी ...”

“कैसी भूल नानी...किसी का खून तो नहीं किया ?”

“हाय राम-हाय सीता !—कैसे बताऊँ तुझे...अरी छोरो ! तूने अपना खून किया है...पुरखों के मुँह पर कालिख पोतने का काम कर डाला है तूने !...जाकर डूब मर कहीं...चुल्हू भर पानी में...”

“पानी दो नानी !”

“क्या करेगी ?”

“डूबूँगी ।” सहज भाव से कहा रचना ने ।

“यह तो सचमुच मरने को तैयार हो गई । हाय राम-हाय सीता !...अरी हरामी ! मैं कैसे जिऊँगी...हर बात का मलौल उड़ाती है छोरी !...हे भगवान, थोड़ी अकल दे मेरी रचना को”

रोने लगी परोसन ! उसका दिल बज्राघात से टूट-टूट हो गया था ।

“हाय राम-हाय सीता ! तू तो रोने लगी नानी !” रचना ने कहा, हिचकी पर तैरते परोसन के स्वर को सुनकर ।

जब उसकी आँखें उठकर अपनी दादी के चेहरे पर टिकीं तो स्तब्ध

रह गई । सचमुच रो रही थी परोसन । उसकी बूढ़ी पलकें जवान बूंदे डुलका रही थीं ।

रचना की सारी हँसी फुर्र हो गई ।

उसने जीवन में दूसरी बार परोसन की आँखों में आँसू देखा था । पहली मरतबा तब रोयी थी उसकी दादी, जब वह शहर पढ़ने जा रही थी । परोसन उसे घण्टों कलेजे की हड्डियों में बाँधे रोती रही थी ।

वह जान गई थी कि तीव्र पीड़ा के आघात से ही परोसन दादी आँसू बहाती है । छोटा-मोटा दुःख तो उसके जीवन में मामूली बात है ।

अवश्य कोई बात हो गई है आज । जरूर किसी दुःख ने परोसन के हृदय को पैनी निगाहों से देखा है, छेदा है !

रचना गम्भीर हो उठी । उसकी सारी चंचलता लड़खड़ा कर गिर पड़ी । उसके होठों की हँसी उड़ गई ।

“दादी !”

“हाँ री !”

“तुम रोती क्यों हो दादी ?”

“रोती कहाँ हूँ ?” अपनी आँखें पाँछु लीं परोसन ने ।

“रोती तो हो...अपनी आँखें देखो, भीगी है...लाऊँ शीशा !.... मैं जान गई दादी क्यों रोती हो तुम ?”

“बता भला...”

“मेरा पेट दर्द देखकर ही तो...पता नहीं मुझे क्या हो गया है दादी !...लगता है पेट में कोई जानवर चलता हो !...तुम चिन्ता न करो, ठीक हो जायगा...मगर तुम रोया न करो, तुम्हें रोती देखकर मुझे भी रोना आ जाता है !”

परोसन रचना के भोले चेहरे की ओर देख रही थी । कितनी निरछल है रचना, किन्तु छल ली गई !

“एक बात बतायेगी तू—सच-सच !” परोसन ने गम्भीर होकर पूछा ।

“तुमसे कुछ छिपाया है दादी !...पूछो भी तो...”

“यौं नहीं...पहले मेरे सर पर हाथ रखकर राम-सीता की कसम खा ।”

इधर परोसन का कहना था और उधर रचना का चट से उसके सर पर हाथ रखकर राम-सीता की कसम खाना ।

अगर कोई दूसरी स्थिति होती तो रचना राम-सीता की कसम भी न खाती किन्तु इस वक्त तो परोसन के आँसुओं से प्रताड़ित थी, पीड़ित थी । कहा सुन लिया उसने ।

रचना ने कसम की रश्म अदा की तो पृच्छा परोसन ने गम्भीर स्वर में—“बता रचना ! तुम्हारी इज्जत का पापड किसने बेला है ?”

“.....” रचना चुप !

क्या बोले बेचारी ! उसकी समझ में तो प्रश्न ही नहीं आया तो उत्तर क्या दे ?

“बोल रचना !...हाथ राम-हाथ सीता ! यह तो चुप हो गई...सिर्फ मुझी से सुनाना चाहेगी !...पूछतो हूँ किस हरामी के पिल्ले ने तेरे आँचल में धब्बा लगाया...गर्दन कटवा लूँगी उसकी...बोल !”

रचना चुप ! चकित ।

“मैं सब कुछ जान गई बेटी !...बेखटके कह जा सब कुछ !....नहीं बोलोगी तो मेरा दिल टूट जायगा...राम-सीता की सौगन्ध खा ली र तूने !” पुचकाकर पूछा परोसन ने ।

“मेरी समझ में तो खाक पत्थर कुछ नहीं आता....क्या कहवाना चाहती हो दादी ! तुम तो पहेली बन रही हो आज !” रचना खीझ भरे स्वर में बोली ।

“हाय राम-हाय सीता ! यह तो मुझमें ही उगलवाना चाहती है सब कुछ, तो सुन ले—औरत भले ही अपने पेट में कोशिश करके बात छिपा ले, किन्तु पाप नहीं छिपा सकती...अपने पेट पर हाथ रखकर देख । देख कि पका फोड़ा होता जा रहा है...” कहते-कहते रुक कर परोसन ने रचना का चेहरा पढ़ा ।

रचना का मुख मण्डल भावहीन था । केवल एक ही भाव था उसके चेहरे पर और वह था नासमझी और भोलापन का ।

“हाय राम-हाय सीता !...लडकी तो भोली बनी है । जवान हो गई पर इशारा भी नहीं समझती...अरी बन्नी ! तू माँ बनने वाली है...तुझे गर्भ है !”

“गर्भ !” चौंक पड़ी रचना, जैसे सॉप छू गया हो उसे—“गर्भ ! बच्चा !...किसे दादी !...क्या मुझे ?”

“हाँ रे हाँ !...तुझे ही...कहाँ से यह आफत अपने पेट में मोल ली है तूने !”

“मैं माँ बनकर क्या करूँगी दादी !...झैया सुनेंगे तो क्या कहेंगे ? मैं तो छुट जाऊँगी दादी !—यह कैसे हो गया दादी !...”

रो पड़ी रचना । उसके ऊपर आसमान फट पड़ा ।

चीख पड़ी वह— ‘मुझे बचाओ दादी !...मेरा दम घुटता जा रहा है...झूब मरूँगी कहीं जाकर...मगर अपने खानदान पर आँच नहीं आने दूँगी...’

“चुप रह रचना !...गलती की है तूने तो हिम्मत से काम ले...सजा भुगतने के लिये तैयार रह...मरने की रट मत लगा—हाय राम-हाय सीता !...क्या होगा भगवान !” परोसन के चेहरे की झुर्रियाँ और स्पष्ट हो गई मारे चिन्ता और भय के ।

“मैं निर्दोष हूँ दादी !...मुझे पता नहीं यह सब कैसे हुआ !”

छैला—२

“यह सब आँखों पर मदहोशी का परदा पड़ जाने से होता है बेटी !”

“चाहे जो कह लो...” रचना सिसक पड़ी । उसकी अन्तर वेदना फूट पड़ी । कैसे समझाये वह अपनी दादी को ।

उसकी आँखों से बहता खारा पानी बोल रहा था कि वह पाक है । लेकिन बूढ़ी परोसन कैसे यकीन कर ले । उसके आँसू देखकर निर्दोष नहीं कह सकती वह ! रचना के हाथ खून से रंगे हैं और बारबार कहती चल रही है कि मैं बेगुनाह हूँ ।

रचना सुबक रही है । वह नहीं जानती कि उससे यह चूक हो कैसे गई ?

रचना तो हमेशा सजग रही ! सपने में भी उसकी आँखें खुली रहती थीं । जवानी का हर कदम फूँक-फूँक कर रखती थी वह । गिरता तो वही है जो आसमान देखकर चलता है या आँखें मूँद कर । रचना ने तो न कभी आकाश निहारा न पलकें ही झपकायीं तो हो गया कैसे यह सब !

विकट प्रश्न रचना के दिमाग में समा गया ।

आज सजल को पहाड़पुर जाना है वसूली के लिये। सुबह से ही तैयारी कर रहा है। तैयारी क्या—बन्दूक की सफाई हो जाय, बस तैयारी ही तैयारी। मन में ठान लिया है उसने, दो सप्ताह तो शिकार भी खेलता आयेगा।

बन्दूक की सफाई में सलग्न वह अपने पुराने शिकार की घटनाओं के चित्र को मस्तिष्क के परदे पर देख रहा है। कितना भयानक होता है शिकार खेलना। जरा भी चूके तो गये। किन्तु वह तो सजग रहता है, उसके शरीर का रोआँ-रोआँ अपनी आँखें खोले आने वाले खतरे से सावधान रहता है।

जरा- सा खटका हुआ और चौंक पड़ा सजल !

उसे लगा जैसे जंगल में है वह और किसी झाड़ी की ओट में कोई छिपा जन्तु उसे अपना शिकार बनाने की ताक में पैतरा बाँध रहा है।

हाथ की बन्दूक खट से फन फैला कर खड़ी हो गई।

“मार दो...चला दो गोली...हाय राम-हाय सीता !...हरदम बन्दूक ही दिखाता है यह तो...पाल-पोस कर इतना बड़ा किया है और...”

“तुम हो दादी !” सजल की तनी बन्दूक शिथिल हो कर झुक गई।

“नहीं तो क्या कोई बाघ है—हाय राम-हाय सीता !...तेरी बन्दूक की आवाज ने तो गाँव की बिल्लियों को भी रहना डराम कर दिया ...रात भर चूहे शरीर पर कूदा करते हैं, कभी खयाल भी नहीं आया होगा कि चूहों का शिकार करें...” कहकर बैठने लगी वह।

गद्दी पर बैठती परोसन दादी की निगाह जब किनारे के बाघ पर पड़ी भयभीत हो कर कुछ दूर ही बैठी। बेचारी की बूढ़ी आँखें कभी-कभी बाघ को जिन्दा समझ लेती हैं। इसीलिये तो हमेशा सजल की उपस्थिति ही में उसके पाँव वहाँ पड़ते हैं।

“चूहों का शिकार तुम्हीं करो दादी !...चूहे बड़े प्यारे हैं न तुम्हें ?”

“हाँ ठाकुर बेटा !...राम-सीता की कसम, मैंने चूहों को पाल-पोस कर आदमी बना दिया....अपने को ही देख न !....मगर तेरे ये शेर तो मर जाने पर भी आँखें फाड़ कर गुराते हैं—हाय राम-हाय सीता ! देखती हूँ तो पैरों को जूड़ों आ जाती हैं, कलेजे की घड़कन बन्द होने लगती है।” कहते-कहते उसने सजल के सजे शरीर को देखा तो बोली—“कहा चना रे सजल !”

“पहाड़पुर !... वसूली के लिए जा रहा हूँ, कल तो बताया था तुम्हें, भूल गई !”

“भूल ही तो गई ठाकुर बेटा !...बूढ़ी भी तो ही चली। अब तो आँखों की रोशनी के संग मति भी विदा हो रही है।”

“आज रचना नहीं दीख पड़ी दादी !...सोयो है क्या अब तक ? वह तो उषा के जागने के पहले ही उठ जाती है...आज तो जगाने भी

छैला—२

नहीं आयी मुझे...” कहते-कहते कुछ गंभीर हो गया सजल । फिर बोला—“एक बात है दादी ! मगर...”

“अगर-मगर क्या बेटा !...कहो न साफ-साफ ! राम-सीता की कसम कोई भेद की बात होगी तो अपने बुढ़ापे की तरह सँभाल रखूँगी... औरतों की जवान बेलगाम होती है लेकिन मैं तो तेरी माँ हूँ बेटा !...”

“बात यह है दादी !” सजल कहने लगा । परोसन दादी के कान खड़े हो गये । वह सजल के पास खिसक आयी । ध्यान से सुनने लगी ।

“रचना तो जवान हो गई अब !”

“हो तो गई...हाय राम-हाय सीता ! तब क्या बच्ची ही रहेगी हमेशा ! मतलब क्या है तेरा !”

“यही कि जवान नारी घर की लाज होती !”

“तो फिर !”

“नारी की लाज दूसरे के घर में ही शोभा धारण करती है...अपने घर में तो काँटा बनकर दुनियाँ की नजरों में गड़ जाती हैं...आज कल रचना कुछ गंभीर कुछ अचंचल होतो जा रही हैं ! उसे कौन सा रोग लग गया है !...तू तो जानती हो दादी !” सजल ने सर उठा कर खुली आँखों से परोसन दादी को देखा ।

रोग के बारे में सजल के मुख से सुनकर घबड़ा उठी वह ।

तो क्या सजल जान गया है सब कुछ ! मगर कैसे ! क्या रचना ने बताया !

परोसन को खामोश देखकर पूछा सजल ने—“कौन सी बीमारी है दादी ! पूछा है तुमने....पूछकर बताना !...उसे मनहूस देखकर दिल बैठने लगता है । रचना मेरी बहन हो नहीं दादी ! माँ भी है...माँ से बहुत कुछ मिलता है उसका चेहरा !”

छैला—२

कहते-कहते सजल की आँखों में दिवंगत माँ की आकृति घूम गई ।
उसके गले में आँसू आ आटके ।

“हाय राम-हाय सीता ! तू तो रो देगा अब...बच्चों की बीमारी तो सबेरे की ओस होती है, दिन चढ़ने दो सूख जायेगी अपने आप...”
परोसन ने सान्त्वना दी । आश्वस्त भी हुई यह जानकर की रचना की गंभीर बीमारी के बारे में अनभिज्ञ है सजल !

“रचना को बुलाओ दादी !...रा देख लूँ...बाहर जा रहा हूँ
न ! आवश्यक कार्य पड़ जाने पर शायद कल न आ सकूँ ।”

परोसन दादी रचना को बुलाने चल पड़ी ।

और रचना !

जब से उसने सुना है अपनी दादी के मुख से कि उसे गर्भ है तब से उस पर पहाड़ टूट पड़ा है पैरों के नीचे की जमीन कांपती मालूम पड़ रही है । कजरी आँखों में रात का अँधेरा छाता जा रहा है । दुनिया की हर चीज जैसे उसकी ओर ऊँगली उठा रही है । ठंडी हवा भी तीर की तरह उसके शरीर में चुभती जा रही है ।

अब तक वह नहीं समझ पा रही थी कि आखिर यह भूज हो कैसे गई उससे !

भला अपनी भूल आदमी को मालूम भी कैसे हो ! और जवानी के दिन तो तूफानी होते हैं, भोके में कब खता हो जाती है, पता भी नहीं लग पाता । ऐसी घड़ी में आँखें भी तो अंधी हो जाती हैं ।

रचना भी जवानी की अंधी आँखों से चुमते शून से भूल को नहीं देख पायी ।

ऐसी स्थिति में क्या करे वह !

क्या कहीं जाकर डूब मरे ! या तन में आग लगाकर सती हो जाये ! कुछ विचार स्थिर नहीं कर पा रही है बेचारी !

छैला—२

मौत की ओर कदम बढ़ाती है तो मैया की आवाज उसके पैरों को पकड़ लेती है । उसे कितना प्यार करता है सजल ।

वह मरेगी नहीं, नहीं मरेगी । अपने मैया के प्यार को नहीं छुलेगी रचना । उसके मैया उसके बगैर नहीं जी सकते ।

लेकिन रचना तो अपवित्र हो गई है । उसने तो अपने अन्तर में विशैली बदबू पाल रखी है । अगर सजल को उसके पेट के पाप के बारे में मालूम हो जाय तो...तो क्या रचना को प्यार करेगा कभी ?

कभी नहीं !

सजल ठाकुर नहीं सह सकेगा अपना अपमान ।

वह ठाकुर है और ठाकुर अपनी शान में दाग लगने के पहले अपनी जान में आग लगा देते हैं !

क्या करे रचना । फिर, वह तो कहीं की नहीं रही अब । कोई सहारा नहीं उसका ।

कितनी बुरी है यह दुनिया । सुख में तो सभी हाथ बँटाते हैं किन्तु दुख में तो कोई झूठी हमदर्दी भी नहीं देता । रचना को दुनिया की जिन्दगी भले ही ठुकरा दे मिट्टी के ठोकरे की तरह, किन्तु तो मौत सहारा देगी ही उसे । वह नहीं दुत्कार सकती ।

कितनी सहृदय होती है मौत !

रचना मरेगी तब ?

जब छोटा-सा पाप कर लेता है इन्सान तो उसे छिपाने के लिए बड़ा से बड़ा पाप करने पर उतारू हो जाता है ! यही हाल रचना का भी था ।

उसने छोटा-सा पुर्जा अपने भाई के नाम लिखा, ताकि दुनिया उसकी मौत का कारण सजल को ही न समझ ले ।

लिख-लाख कर उसके कदम कमरे से बाहर होने के लिए मचल पड़े । इस समय रचना के चेहरे पर अजीब गंभीरता खेल रही थी ।

उसकी आँखें सतर्कता से चारों तरफ देख रही थीं। अँधेरी रात में चोरी करते चोर की भौंति कि कोई देख तो नहीं रहा है !

तभी—

चौक पड़ी वह किसी के पैरों की मामूली आइट सुनकर ।

देखा उसने, सामने परोसन दादी था । रचना का चेहरा फक्क रह गया । उसकी भयानक गंभीरता और भी गाढ़ी हो गई ।

“चल बेटी ! तुझे ठाकुर बेटा बुला रहा है...हाय राम हाय सीता यह क्या हालत बना रखी है तूने !” रचना के उदास मुख को देखकर बोली परोसन दादी—“सबेरे को नींद भी नहीं पोछी है आँखों से ?... पागल मत बन रचना !...मैं सारा इन्तजाम कर दूँगी....धीरज घर पहले....गलती करके मौत मत बुला....”

बिना उत्तर दिए रचना परोसन दादी के पीछे हो ली । परोसन दादी को देखकर उसे सहारा मिल जाता है—जीने का । किन्तु परोसन दादी बार-बार उसे दोषी क्यों बनाती है ? उसने तो कोई गलती नहीं की । उसे तो यह भी नहीं पता कि उसे गर्भ कैसे ठहर गया है । शहर में उसका कोई पुरुष साथी तो नहीं था और नर-नारी के सम्पर्क के बगैर यह है असम्भव । पुरुष के देखने भर से ही गर्भ तो ठहरता नहीं—

तो फिर ?

अजीब उलझन है ।

धूल भरे आकाश की तरह उदास चेहरा लिए रचना सजल ठाकुर के सामने आकर खड़ी हो गई । मगर गद्दी से दूर ही ।

“पास आ रचना !” सजल ने स्निग्ध वाणी में कहा—“इतनी दूर खड़ी है कि राखी का गाँठ भी नहीं बाँध सकती....”

“क्या कहते हो भैया तुम ?” काँपते स्वर को सँभाल कर बोली रचना । मुस्कुराने का व्यर्थ हठ भी किया ।

छैला—२

“झूठ तो कहता नहीं...कल से मुँह भी नहीं दिखाया तूने !....कटे पतंग की तरह साथ ही छोड़ देना चाहती है ।” असीम व्यथा निहित थी सजल के स्वर में ।

रचना पास आकर खड़ी हो गई ।

उसकी आँखें जमीन की छाती पर कुछ खोज रही थीं निगाहों को इतनी भी हिम्मत नहीं हो पा रही थी कि पलकें उठाकर भैया का मुख निहार ले ।

रचना को लगा कि उसके ठाकुर भैया की दृष्टि उसके पेट के पाप को देख गयी हैं—एक टक !

उसने आँचल ठीक करने के बहाने अपने शरीर को सावधानी से ढकना चाहा ।

तभी—

पेट का पाप हिल उठा । रचना पेट थाम कर जमीन पर बैठ गई । पूर्ववत् पीड़ा होने लगी और लगी छुटपटाने ।

परोसन दादी ने सहारा दिया । सजल घबड़ा उठा ।

“रचना !...क्या हो गया तुझे ?”

“कुछ नहीं भैया, कुछ नहीं....” कराहती हुई बोली रचना ।

“बहाना बनाती है तू !...मेरी आँखें अन्धी नहीं...दिनो दिन तेरी हालत पुरानी इमारत की तरह गिरती जा रही है...”

“सरकार ! सब ठीक है—मुंशीजी दो-चार लठैतों के संग बाहर दरवाजे पर आपको राह देख रहे हैं ।” एक लठैत ने आकर कहा ।

“अभी आया—दादी रचना को भीतर ले जाओ । मैं पहाड़पुर जा रहा हूँ न, उधर से आते समय शहर से किसी डाक्टर को लेता आऊँगा...रचना अपने गेग को नासूर बना देना चाहती है...मुझे पागल

छैला—२

कर डालेगी यह दादी !...खुद मरकर मेरी दुनिया वीरान कर देना चाहती है यह ।”

परोसन दादी रचना को सहारा देकर भीतर ले गयी ।

सजल चिन्तित होकर हवेली के बाहर आया । अपने तैन्न घोड़े की पीठ पर बैठ गया । ऍड लगाते ही तूफानी घोड़ा हवा से बातें करने लगा । मुंशी कारिन्दा वगैरह पहले ही प्रस्थान कर चुके थे ।

रचना !

जीवन से निराश रचना ने मरने का बहुत मौका खोजा । किन्तु मौका है कि हाथ ही नहीं लगता । परोसन दादी तो रचना के पास जोंक की तरह लगी रहती है । रचना की नाक में दम कर दिया है इस बुढ़िया परोसन ने । एक क्षण ही दहने का नाम नहीं लेती ।

रचना गमगीन होकर खिड़की पर बैठी है । सोच रही है—अगर खिड़की में छुड़ नहीं लगे होते तो कूद ही जाती वह । जमीन पर परोसन दादी बैठी है । कठोरी में किसी चीज का घोल तैयार कर रही है । शायद कोई दवा होगी रचना के पाप का गला घोटने की ।

घोल तैयार कर उसने रचना की ओर बढ़ाया ।

“मैं नहीं पीती दादी !....कल मे ही कितनी तरह की दवा पिला चुकी तुम मगर फायदा कुछ होता नहीं....कहती हूँ कहीं से जहर लाकर दे दो तो सुनती नहीं...अभागिन रचना को मर जाने दो । कोढ़ पाल कर करोगी क्या !”

“हाय राम-हाय सीता !” कह कर कपार पीट लिया परोसन दादी ने—“यह लडकी तो मरने की ही बात करती है...अरे हरामी, हाथ में धाव हो जाने से काट कर फेंक थोड़े ही देता है कोई ?...पोले दवा, सब ठीक हो जायगा—बदनामी से बच जायगी ।”

“बदनामी से बचाना चाहती हो तो मार डालो दादी !...अब बचा ही क्या है ? कल भैया डाक्टर लेकर कहीं आगये तो क्या छिपा रहेगा कुछ ?... पर मेरी समझ में नहीं आता दादी कि किसी मर्द के सम्पर्क के बिना यह सब कैसे हो गया ?”

“क्या कहती है तू !... तूने किसी से प्रेम नहीं किया !” आश्चर्य से परोसन दादी की आँखें फट पड़ी ।

“हाँ दादी !...लेकिन तुम्हें यकीन तो होगा नहीं...कैसे बताऊँ तुम्हें ?”

“बता बेटी ।”

“जाने दो दादी !...अब कुछ बताने की जरूरत नहीं । कल तो डाक्टर आ ही रहा है । सब कुछ वही बता देगा !...भैया का सिर नीचा होगा । लोग मुझ पर थूकेंगे । भैया मेरा गला घोट देंगे—इतना ही तो...मैं मर जाऊँगी...मरना तो चाहती ही हूँ....” रचना भारी गले से बोली ।

परोसन दादी ने किसी प्रकार हठ करके रचना को दवा पिला दी । कुछ राहत तो मिल ही गई उसे । पहले तो रुक रुक कर पीड़ा से चीत्कार कर उठती थी । किन्तु यह दवा पिये एक घंटे से ऊपर हो गया अभी तक दर्द पैदा नहीं हुआ है । इससे रचना को भविष्य के अन्धकार में क्षीण प्रकाश की रेखा दिखायी पड़ने लगी है ।

× × ×

छैला—२

पहाड़पुर में रियाया प्रफुल्ल हो उठी है। सभी हाथों में कुछ भेंट लिये गाँव के बाहरी हिस्से में बनी कोठी की ओर जा रहे हैं।

पक्की कोठी के बरामदे में, कुर्सी पर कोई जवान बैठा है। चेहरे पर तेज और आँखों में अजीब चमक लिये।

“मुंशी जी गाँव के मुखिया को बुलाओ।” जवान बोला।

उसके स्वर में आशा थी। पास लेंघते मुंशी जी हड़बड़ा कर सामने आ खड़े हुए हाथ जोड़ कर।

बोले—“अभी बड़े राजा! अरे ओ महँगू!”

पुकार लगाने लगे मुंशी जी।

“जरा धीरे मुंशी बाबू!...अभी ज़िन्दा हूँ माई-बाप!” महँगू पास ही खड़ा था।

“समझे कि नहीं?...यहीं हो—मुखिया को बुलाओ।”

“हम हाजिर है अज़दाता!...” एक बूढ़ा सामने आकर बोला।

“हम वसूली के लिए आये हैं मुखिया जी!” मुंशी जी बोले—

“जितनी जल्दी हो, उतनी जल्दी हम लोग निपटना चाहते हैं, समझे कि नहीं!...”

“समझ गया मुंशी बाबू!...पहले आप निपट ही आओ सरकार! पानी मँगवा दूँ क्या?” मुखिया गंभीरता पूर्वक बोला।

सुन कर मुंशी जी तैश में आ गये। बोले—“तमीज़ से बात करो मुखिया!...समझे कि नहीं!...गोबर भरा है तुम्हारे दिमाग में...पहले पाय आओ...मेरा गुस्सा बुरा होता है...महँगू! वहीं-खाता इधर ला समझे कि नहीं!”

मुंशी जी की झड़प से मुखिया सिटपिटा गया बेचारा! सजल होठों में ही मुस्कराया सिर्फ।

तीसरे पहर वसूली समाप्त हो गई। सजल बेकार हो गया। बेकार

छैला—२

बैठने से तो आदमी अकर्मण्य हो जाता है। खाली बैठने से अच्छा तो यही होगा कि जंगल में जाकर जानवरों का शिकार ही खेल आये।

सजल तैयार हो गया।

महँगू और एक लटैत को लेकर सजल जंगल की सघनता की ओर बढ़ा। टेढ़ी-मेढ़ी पगड़ियों पर शान से बढ़ता जा रहा था वह। आँखें बन की शोभा निरख रही थीं। उसके मस्तिष्क की सारी चिन्ता हरे-हरे मनोहारी पेड़ों, जंगली फूलों के झुरमुट में खो गई।

एक ब एक उसके विचारों में रचना आई, फिर रामगढ़ के जंगल में शिकार खेलते-खेलते शिकार हो गया भाई। विचलित हो उठा वह।

“सरकार ! कोई जानवर दीख नहीं पड़ता...शाम भी हो गई...लौटते-लौटते अँधेरा हो जायगा हजूर !” महँगू बोला।

“थोड़ी दूर और चलो।”

थोड़ी ही दूर चले थे कि सघन जंगल के किसी कोने से एक चीख सुनाई दी।

चमक कर खड़ा हो गया सजल।

उसके रुकते न रुकते दूसरी चीख भी सुनाई पड़ी।

“बन्दूक मुझे दो।” सजल के हाथों में बन्दूक आ गई।

तेजी से उस ओर बढ़ा, जिधर से अभी-अभी हवा के साथ किसी के गले से मौत की चीख आई थी।

घटनास्थल पर पहुँच कर जो कुछ देखा सजल ने उसे देखकर स्तब्ध रह गया। उसकी समझ में ही नहीं आया कि क्या करे और क्या न करे।

बड़ा खौफनाक दृश्य था वह।

एक व्यक्ति का आधा शरीर मानव-भन्नी अजगर के मुख में था। दूसरा जमीन पर था। होठों में कुछ बुदबुदाता और हाथ के छुरे से अजगर के शरीर पर वार करता।

छैला—२

लेकिन अजगर था कि उस पर उसके तेज छुरे का कुछ भी असर नहीं । वह मुँह में पड़े व्यक्ति को धीरे-धीरे लील रहा था ।

दूसरा व्यक्ति क्रोधावेश में करता जा रहा था छुरे का वार ।

विचित्र पोशाक थी उसकी—अजगर के चमड़े का ही तो था ।

देखते देखते अजगर के भयानक मुँह के बाहर निकले पैर भी लुप्त हो गये ।

“उस्ताद !” दूसरा व्यक्ति चीख पड़ा । क्रोध में जलकर उसने अपना छुरा अजगर के मस्तक में भोंक दिया ।

क्रोधित अजगर फुँफकार कर झपटा उसकी ओर और...

“गोली मार दो सरकार !” महँगू चीखा ।

अनोखे, किन्तु रोमांचकारी दृश्य से जड़वत सज्जल सजग हुआ ।

उसकी बन्दूक तनी और !

धांय !

जो कुछ सुना है सजल ने उस पर विश्वास करले !
उसके मस्तिष्क में बवण्डर उठ गया है । अपना दिमाग स्थिर नहीं
कर पा रहा है वह । चिन्ताग्रस्त होकर कुर्सी पर बैठा है मनमारे ।
हरे-भरे पहाड़ की ओर निहार रहा है ।

इस जंगल की सघनता के पीछे एक ऐसी दुनिया है जहाँ के निवासी
सँपेरे हैं । साँपों से खेलते हैं, साँपों को खाते हैं । विचित्र जीवन-यापन
है, पहाड़ के उस पार रहने वाले लोगों का ।

मंत्र के बल पर साँप काटे आदमी को जिन्दा कर लेते हैं उस
दुनिया के निवासी ।

लेकिन इससे भी बढ़कर तो मुखिया के मुख की बात है । अभी
तक उसकी बात कानों में गूँज रही है, उसी चीख की तरह जो उसने
जंगल में सुनी थी ।

‘सरकार ! तंत्र-मंत्र की बात छोड़िये....पास ही के सेदहॉ गाँव में
तो लोग साँप काटे आदमी को छूकर जिन्दा कर लेते हैं ।’

“होता होगा ऐसा भी”—मन में सोचा सबल ने । यह दुनिया ही आश्चर्य है इसकी चीजें क्यों नहीं आश्चर्यमय होंगी ।

ये सब फालतू बातें हैं । इस पर सोचने-विचारने से उसका कोई लाभ नहीं । और बेकार की बातें सोचकर करेगा ही क्या !

वह उठकर टहलने लगा । देखा, कुछ दूर पर मुंशीजी सँपेरे में काफी दिलचस्पी ले रहे हैं । वह टहलता रहा भावमग्न !

और उधर मुंशीजी !

“यह तुम्हारे हाथ में क्या है जी ?” बूढ़े मुंशीजी ने पूछा । इस तरह आँखें गड़ाकर देख रहे थे वे कि मस्तक की रेखायें उग आई थीं ।

“यह महुवर है सरकार !” बोला सँपेरा ।

“महुवर !...समझा ! साँप नाचता है न इसकी आवाज पर, वही महुवर है न ? चश्मा कोठरी में है, नहीं तो पहचान ही जाता ।... सुनाओ जरा...सुना है बड़ा मोठा स्वर होता है इसका; मगर अभी तक सुनने का मौका नहीं मिला....कलम का खिलाड़ी हूँ—समझे कि नहीं ?—सो महुवर से मतलब ही क्या ?”

“सुनोगे सरकार !”

“कैसे हो जी तुम, समझे कि नहीं ? कहा तो सुनाओ....लेकिन भई, साँप वाँप मत बुला लेना, नहीं तो मेरी नानी इस बुढ़ापे में भी मर जायगी...फिर कोई पानी देने वाला भी नहीं है....समझे कि नहीं ?”

“समझ गया सरकार !”

सँपेरे ने होठों पर महुवर रखी । गाल फुलाकर फूँक मारी ! एक मादक स्वर लहरी वातावरण में तैर उठी । बूढ़े मुंशीजी उँकड़ू बैठे थे । उनके दोनों हाथ घुटने का चुम्बन कर रहे थे ।

और सँपेरा के गाल फूल-पचक रहे थे । उसकी जादू भरी उँगलियाँ महुवर के छिद्रों पर उठ-गिर कर स्वर में सम्मोहन पैदा कर रही थीं ।

मुंशीजी विभोर हो उठे ।

सँपेरे की स्वर-साधना चलती रही । मुंशीजी की बेहोशी बढ़ती गई । बढ़ते-बढ़ते इतनी बढ़ गई कि मुंशीजी के जवान दिल की खुशी पलकों पर भार बनकर लटक गई । पुतलियाँ बन्द हो गई ।

“भई, वाह ! कमाल बजाते हो ।” हर्षातिरेक से विह्वल आवाज थी मुंशीजी की—“जी चाइता है नाचने लगूँ उठकर ।”

“तो नाचो न मुंशी बाबू !....सच जानो सोने में सुगन्ध आ जायगा ।” पास बैठे महँगू ने कहा ।

“अर्जो क्या नाचूँ !....पैरों में कम्पन तो है, मगर नाचने का सजीका नहीं आता...अलबत्ता बूढ़ो मुंशीआइन रहती तो बनरिया की तरह ‘ताक येई’ नाचने लगती । बेचारी अब तो भगवान के धाम में मेरा इन्तजार कर रही होगी रो-रोके, समझे कि नहीं !....भाई सँपेरे ! जरा और तेज बजाओ—हाँ अब ठीक है ।”

“तुम्हें बड़ा अच्छा लग रहा है मुंशीबाबू !” महँगू ने फिर छोड़ा ।

मुंशीजी की बातों में ही उसे आनन्द मिल रहा था ।

“अच्छा तो लग रहा है फिर बड़ा अच्छा क्या ?...बड़ा पाजी है महँगू तू ! समझे कि नहीं ! चुपचाप सुनता चल...मजा किरकिरा करने से मिलता क्या है तुम्हें ?” मुंशीजी ने डाँटा, आदेश भरे स्वर में ।

सुनकर चुप रह गया महँगू ।

महुवर की मधुर गुंजन की डोर में उलझकर मुंशीजी उन्मत्त हो उठे थे । हवा भी आदिस्ता-आदिस्ता बह रही थी भीठा राग सुनने के लिये ।

महँगू को मौत-सी निस्तब्ध काँटे जैसी लगी । उसे महुवर का स्वर कर्णप्रिय नहीं लगा । उसने छोड़ा मुंशी को—

“मुंशी सरकार !....तुम झूमने लगे हो अजदाता !”

“समझे कि नहीं ! तो तू काहे चुप बैठा है ! झूम तू भी...” नींद

से माती लग रही थी मुन्शीजी की आवाज—“भई बाह !...खूब बजाते हो महुवर !...मेरा शादी की शहनाई भी भूल मारे इसके आगे...”

“तुम्हारी शादी में शहनाई बजो थो सरकार !”

“शहनाई !...खूब बजी थी महंगू ! कि महीनों उसकी आवाज कानों में गूँगती रह गई...मुन्शीआइन तो मरते दम तक सुनती रही.... तेरे तो पाँव भी धरती पर नहीं पड़े थे । तेरा बाप भी तो गुल्ली डंडा ही खेलता था उस वक्त ।”

“एक बात कहूँ सरकार !”

“इतना तो कह रहा है...एक आध और कह दे !...तुम रुको नहीं भाई बजाते जाओ । तुम्हारी आवाज पर ही तो साँस ले रहा हूँ !”

“शादी करो मुन्शी दादा !”

“क्या कहता है तू !...भला इस बूढ़े को कौन पछेगा !...जवान था तो फूटा आँखें भी पल भर रोक कर दखने के लिये लालायित रहती थीं समझे कि नहीं ! बूढ़ा हो गया हूँ तो अच्छी आँखें भा नहीं दखना चाहती ।”

कहने को तो कह गये मुंशी जी किन्तु शादी की बात ने उनके कानों में मीठा-मीठा रस घोल दिया, जैसे उनकी जिह्वा पर मधु टपका दिया हो महंगू ने ।

“किसकी आँखें तुम्हें बूढ़ा कहती हैं सरकार !...आँख निकाल लूँगा उसकी...जवानी कसम ! कभी आइना देखो सरकार तो पता चले कि कितनी लज्जत है तुममें ! बाप कसम मुंशी दादा !...अगर मैं औरत रहता तो तुम्हें भंग-बूटी बनाकर गट्ट कर जाता ताकि जिन्दगी भर दिल में मदहोशी पैदा करते रहो !” मुलायम गले से कहा महंगू ने ।

“आइना तो तभी का छूट गया महंगू । जब मुंशीआइन रुठ कर चली गई !...सच मानो वह आइने से कम नहीं थी !...मरते दम उसने

छैला—२

भी शादी कर लेने को कहा था समझे कि नहीं। बेचारी बड़ी भली थी।” ठंडी आह भर कर बोले मुंशी जी।

“लेकिन तुम बड़े बुरे हो सरकार।”

“कैसे !” कुछ रोष में बोले मुंशीजी। वे अपनी बुराई भला कैसे सहन करते।

“ऐसे सरकार की तुमने मुंशीआइन दादी की आत्मा के सन्तोष के लिये शादी नहीं की...कितने कष्ट में होगी वह।” बनावटा दुख की कराह भरते हुए बोला महँगू।

“तू ठीक कहता है महँगू ! समझे कि नहीं !...पास रहकर इतना रोती थी वह। दूर रहने पर तो बादल बन गई होगी !...बूढ़ा हो गया हूँ तो क्या दिल अभी जवान है समझे कि नहीं हूँ ! मैं इच्छा पूरी करूँगा महँगू।” मुंशीजी की वाणी में हिमालय जैसी दृढ़ता थी।

“जरूर पूरी करो सरकार !...तुम्हारे मन की मुराद भी पूरी होगी और मुंशीआइन दादी तो वैतरनी भी पार कर जायँगी...और बूढ़े तो हुये हो नहीं तुम ! अच्छे खासे जवान तो हो ऐसे कि भैंसा भी तुम दबा ले।”

“हाँ रे हाँ ! शरीर बूढ़ा हो जाने से दिल तो बूढ़ा नहीं होता—हविश तो मिटती नहीं।” मुंशी जी मन ही मन दूसरी शादी की सुहागरात देखने लगे।

“तो पक्का रहा न मुंशी दादा !”

“हाँ पोते !...बिलकुल पक्का कटहल ही समझो ! समझे कि नहीं !”

“महँगू !”

पुकारा सजल ने तो मुंशीजी का पिंड छोड़कर चला गया वह।

मुंशीजी को फुरसत मिली। और फुरसत में इंसान को कोई काम नहीं मिलता है तो खुराफात ही चाहिये। किन्तु मुंशी जी तो

बदतमीज बेहूदे ये नहीं कि शैतानी करतै ! बूढ़े ये और अनुभवी भी ।
 सो अनुभव वाली खुराफात ही करनी चाहिये ।

“भई, सँपेरे !...बजाते चलो...अरे !” चौक पड़े मुन्शीजी—
 “क...क....कहाँ चले गये भाई तुम ! तुम समझे की नहीं !...बजा
 नहीं रहे हो क्या !”

सँपेरा मुन्शीजी को लठैत से बातें करते देख कर चुप हो गया था ।
 उसके खामोश चेहरे पर गम की लकीरें उभरी थीं ।

“तुम चुप क्यों हो गये भाई ! बोलो भी तो समझे की नहीं ! कि
 बोलना ही नहीं आता अधिक !... महुवर बजाते हो तो मुँह भी बजाना
 सीखो...घर की याद सता रही है क्या !...”

“याद तो आती ही रहती है सरकार !...उसे रोकने की ताकत
 किसमें भजा” उदास वाणी भी थी सँपेरे की ।

“रोनी आवाज में मत बोलो भाई !...अभी तो खासे जवान हो
 जरा तड़प कर बोला करो....मुझे देखो बूढ़ा हो गया, मगर जवान में
 लगाम नहीं लगा सका....बोलने लगता हूँ तो समझे की नहीं !...बड़े
 राजा के घोड़े की चाल भी हार मान लेती है...कोई दुख है तुम्हें !”
 मुन्शी जी सहानुभूति एवं उदारता से सदय होकर बोले ।

“एक दुख हो तो बताऊँ सरकार !...यहाँ तो जिन्दगी ही गम बन
 गई है ।” दिल का दर्द स्वर में भरकर बोला सँपेरा !

“खैर छोड़ो इन बातों को, यहाँ रहोगे तो सारा दुख दूर हो
 जायगा...हाँ, यह तो बताओ, जिसे अजगर ने लील लिया, वह कौन
 था तुम्हारा !”

“मेरा उस्ताद या सरकार !”

“तब तो जवान भी होगा !...अपनी जवानी में मैं भी उस्ताद था,
 भाई ! मगर तुम्हारे जैसा चेला नहीं पैदा कर सका समझे कि नहीं !...”

छैला—२

कहते-कहते मुन्शी जी जरा तन कर बैठ गये । स्वर में थोड़ा गर्व भर आया :

“होंगे सरकार ! मगर अपनी जवानी में ऐसा धक्का लगा कि उस्तादी का सपना भी अपना नहीं रहा !”

“धक्का खाते चलो भाई ! समझे की नहीं !...बड़ा मजा मिलता है धक्का खाने में...जब मेरी मुन्शीआइन रुठ जाती थी तो मुझे भी धक्का लगता था समझे को नहीं !”

“समझ गया सरकार !”

“क्या समझे !”

“यही की इजूर धक्का लगता था ”

“ठीक !...भाई, धक्का भी ऐसा धक्का लगता था कि घंटों कलेजा धकधकाता रह जाता था । मगर अब तो तगसते ही रह जाते हैं ।” मुन्शीजी ने कहा—“लो मैं तो बहक गया । कहा न, बात की लात से मेरी जवान रास्ता ही भूल जाती है... हाँ, तो क्या कह रहा था—तुम्हारा उस्ताद अजगर के पेट में कैसे चला गया !—बेचारा !...वह भी तो जंतर-मंतर जानता होगा ! वह भी तो सँपेरा था तुम्हारी तरह !”

“हाँ सरकार !”

“तो फिर ?” मुन्शी जी उत्सुक आँखों से उसकी ओर देखने लगे !

“जब मौत आ जाती है सरकार, तो किसी का बस नहीं चलता ”

“ठीक कहते हो तुम !.... समुरी कह कर भी तो नहीं आती.... मगर तुम तो थे, क्यों नहीं मंतर पढ़ने लगे ?” मुन्शी ने फिर प्रश्न किया ।

“जब बुरा वक्त आ जाता है मुन्शी बाबू, तो मति नष्ट हो जाती है और जंतर-मंतर तो दिमागी खेल है न !” सँपेरे ने जबाब दिया ।

“सच कहते हो तुम, समझे कि नहीं ? राजा राम चन्दर भी मति

खोने पर ही सोने के मृगा के पीछे धनुष-बान लेकर दौड़े थे...भला सोने का हिरन हो सकता है ?...”

“सोने का हिरन !” सँपेरे को बड़ी अजीब बात लगी यह—“यहाँ होता होगा मुन्शी बाबू !...मेरे देश में तो नहीं होता !”

“अजी, यहाँ भी नहीं होता !” जोर देकर बोले मुन्शी जी—
“विनाश काले विपरीत बुद्धि वाला ही तो हिसाब-किताब है सही-सही ?
सो राजा राम चन्दर भी चक्कर में आ ही गये !” मुन्शी जी अपना व्याख्यान देते हुए कह ही रहे थे कि बीच ही में सँपेरा प्रश्न कर बैठा ।

“राजा रामचन्दर कौन थे सरकार !...और सोने का हिरन कैसा ?” सँपेरे को इस नवीन दुनिया की हर बात, हर चीज विस्मय भरी प्रतीत हो रही थी ।

“अजी ये सब पौराणिक कथा है...मेरा विश्वास नहीं ।” मुन्शी जी बोले—“मुन्शीआइन ने मुझे मार-मार कर हकीम बना दिया समझे कि नहीं ?”

“समझा सरकार !”

“क्या समझे—बोलो ?”

“हाँ सरकार ! क्यों नहीं समझा कि मुन्शीआइन ने मार-मार कर आपको हकीम बना दिया ।”

“खाक समझे, समझे कि नहीं ?....टीक से सुनो !” मुन्शी जी बिगड़ पड़े ।

बेचारा सँपेरा सिटपिटा गया ।

मुन्शी जी स्वयं फिर कहने लगे—“माई मेरा मतलब यह था कि मैं भी अनहोनी बातों पर विश्वास करने लगा—समझे कि नहीं ?....
और लगा हनुमान चालीसा का पाठ करने—‘जय हनुमान शान-गुन सागर जय कपीस तिहुँ लोक उजागर !’—आदि आदि...मुन्शीजी ने किसी

तरह अपना भाषण समाप्त किया फिर बोले—“आगे क्या इरादा है तुम्हारा ?”

“कोई साध बाकी नहीं सरकार !...जिन्दगी में कोई उम्मीद नहीं अब तो...राजा साहब कल जंगल में नहीं पहुँचते तो मेरा भी बनाजा निकल गया होता...”

“तुम मई ! बड़े कमजोर दिल के आदमी हो समझे, कि नहीं ?... कैसे रह सकोगे यहाँ ! हिम्मत से काम लो जरा !...कमजोर आदमी को दुनिया दबाती है—समझे...” मुंशीजी गंभीर होकर उपदेश दे रहे थे ।

“दिल कमजोर हो सकता है मुंशी बाबू ! हाथों की ताकत अभी बिन्दा है...और जिसके पास जिस्मानी ताकत है उसका दुनिया बाल भी टेढ़ा नहीं कर सकती...तुम लोगों पर भार बन कर नहीं रहूँगा सरकार !...मंतर पढ़-पढ़ कर लोगों को जिन्दगी दूँगा...लोग बदले में हुआये देने लगेंगे तो इस पापी पेट के लिए खाना ही माँग लूँगा ?” सँपेरे के स्वर में दृढ़-विश्वास बोल रहा था ।

“अपने घर नहीं जाओगे कभी ?”

“घर में तो आग लग गई सरकार !...वहाँ रखा ही क्या होगा राख ही तो...सभी से नाता तोड़ आया, यहाँ तक कि हमदर्दी देने वाला कोई दोस्त भी नहीं बचा...बूढ़ी माँ है, उसे गाँव वाले सहारा दे ही देंगे ।” वेदना थी सँपेरे की आवाज में ।

आदमी बेकार हो जाता है तो सहारा खोजता है और सहारा मिलता है उसे सिर्फ उम्मीद का ।

“क्यों भाई तुम्हें अपने माँ से प्यार नहीं ?”

“है क्यों नहीं मुन्शी सरकार !...कभी-कभी फर्ज के आगे अपने को

छैला—२

मुलाना ही पड़ता है...याद आती है तो दो-चार आँख बहा लेता हूँ—
या सपने में अक्सर भेंट कर लेता हूँ....” कहते-कहते सँपेरे को अपनी माँ
याद आ गई तो चुप हो गया ।

थोड़ी देर बाद !

“एक बात है सरकार !...पूछूँ !”

“हाँ हाँ, बेखटके !...समझे की नहीं !”

“ये राजा साहब हैं न !...” कहना शुरू किया सँपेरे ने ।

“हैं तो...वह देखो, उधर !” बीच ही में टॉग अड़ा दिया मुन्शी ने !

“उनकी सूरत मेरे छैला से मिलती है बाबूजी !...अजीब बात है !
चाल-ढाल, शकल-सूरत, सभी कुछ एक सी... दुनिया में एक ही चेहरे
के दो पुतले ! कुछ समझ में नहीं आता ।”

“समझे कि नहीं ! यही तो ईश्वर की माया है भाई !...कहीं धूप
कहीं छाया !...इस चक्कर में मत पड़ो...मेरी मुन्शीआइन का चेहरा भी
आसमान के चाँद से मिलता जुलता था...कहता हूँ तो लोग हँसते हैं
समझे की नहीं ! मगर बात ऐसी ही थी...यह छैला कौन था तुम्हारा !
...हम लोग तो नाचने वालों को छैला कहते हैं...” मुन्शीजी ने सवाल
किया और अपनी आँखें पोछ कर उसकी ओर देखने लगे ।

“वह सरकार !...वह !...”

“मुन्शी बाबू !...बड़े राजा बुला रहे हैं तुम्हें...जाओ !” आकर
महँगू ने कहा—“बातें करके अभी मत यका दो बेचारे को...यक
जायगा तो तुम्हारी शादी में महुवर क्या खाक बजायेगा !”

मुन्शी जी को महँगू का आना बड़ा बुरा लगा, किन्तु बड़े राजा की
आज्ञा टालने की क्षमता उनमें नहीं !

उठकर खड़े हो गये वे । झटकार कर घोती ठीक की, जो एक पैर
के बुँटने के ऊपर और दूसरे का झुक कर पैंड़ी चूम रही थी ।

छैला—२

जाते-जाते मुन्शीजी ने सँपेरे से कहा—“देखो भाई, भाग मत जाना कहीं—समझे कि नहीं ?...मेरी शादी में महुवर बजाना ही पड़ेगा तुम्हें !”

“बजा दूँगा सरकार ?...आपका ही तो आसरा है ।”

मुन्शीजी डरते-काँपते सजल के सामने खड़े हो गये । बोले—
“आपने ही बुनाया सरकार !...”

“हां, मुन्शी दादा !...तुम सँपेरे को लेकर हवेली चलो...शाम तक पहुँच जाओगे ।” कहा सजल ने गंभीर होकर ।

“और आप अन्नदाता !”

“मैं शहर जाऊँगा । मेरे साथ महँगू रहेगा...रचना अस्वस्थ है न मुन्शी दादा !...किसी अनुभवही डाक्टर को लेकर कल सबेरे आऊँगा मैं !”

रचना की अस्वस्थताके बारे में सुनकर मुन्शीजी में कुछ हरकत आई । और उनके अघरों से निकला—“च...च...” सहानुभूति का स्वर ।

फिर बोले—“जैसी आज्ञा !” मुन्शीजी के दोनों हाथ जुड़ गये ।

“मैंने लाख बार कहा मुन्शी दादा कि तुम बुजुर्ग हो, आज्ञा मत माँगा करो...हर बात में सरकार, अन्नदाता, आज्ञा श्रीमान् ! मुझे ठीक नहीं लगता...”

“आदत है ठाकुर बेठा ! समझे कि नहीं ?...तोते की तरह याद हो गया है यह तो...आगे से ध्यान रखूँगा...जाऊँ तब ?”

“अवश्य !”

सजल की आज्ञा पाकर मुन्शी जी ने गाड़ीवान को बैलगाड़ी तैयार करने का हुक्म दिया ।

घंटे भर बाद ही मुन्शीजी ने सँपेरे के साथ, महुवारी इलाके की ओर प्रस्थान कर दिया । दिवस का अवसान हो रहा था ।

छैला—२

देहाती बैलगाड़ी कच्ची सड़क की लीक पर 'चर्र-चों' का मधुर संगीत सुनाती चली जा रही थी ।

सँपेरा चारों ओर बिलरी सुषमा निहार रहा था विभोर होकर । मुन्शी जी ठंडी-ठंडी हवा को थपकी से ऊँघ रहे थे । उनकी पलकों के परदे पर दूसरी शादी की सुहाग रात झिलमिल रही थी ।

जिस मौत से भागकर कहीं दूर जाना चाहता है इन्सान ! वही मौत उसके जीवन के साथ-साथ ही आँखें खोल घूरने लगती है उसे ।

मगर अन्धा इन्सान अनुसरण करने वाली मृत्यु की भयानकता नहीं देख पाता । अगर वह गौर से देखे तो उसे मालूम हो कि बचपन के मुरझाने पर जवानी, जवानी का जनाज़ा निकलने के बाद बुढ़ापा ।

तो क्या मौत ही जीवन का चरम विकास नहीं ?

हाड-मॉस के बने इन्सान के किस कदम पर 'रामनाम सत्य' का 'माइल स्टोन' गड़ा है वह नहीं जानता ।

महुवारी रियासत के मुंशी गिरधारी चरण को भी अपने भविष्य की बात नहीं मालूम । बुजुर्गी की लात खाकर कमर कमान की तरह झुक गई है, किन्तु जीने का सपना नींद में भी देखना नहीं भूलते । उन्हें पता नहीं कि सोंस का तीर कमर की कमान पर चढ़कर कब छुट जाय ।

मगर मुंशी जी तो कहते हैं—जान भले ही निकल जाय, किन्तु

छैला—२

इन्सान होने के नाते शान से तो जीना ही चाहिये ताकि मरने के बाद भी लोग मान से नाम ले ।

अन्धेरा अट्टहास कर उठा । चाँद नहीं निकला है अभी । सितारे चमक रहे हैं जैसे चाँद की सारी ज्योत्स्ना लेकर ये ही निखर पड़ेंगे ।

बैलगाड़ी 'चर्र-चौ' का पुराना राग अलापती थके मुसाफिर की तरह धीरे-धीरे बढ़ी जा रही है । गाड़ी के पहिये जब कभी राह में पड़े किसी कंकड़ के सर पर चढ़ जाते हैं तो उदण्ड चट्टान का छोटा-सा नादान टुकड़ा क्रोधावेश में अपना सर कुचलने वाले को विचित्र तरह से फेंक देता है !

और तब गाड़ी में एक दोल पैदा हो जाती । गाड़ी के इस सिहरन से आशकित हो कर मुंशी जी बेचारे पलकों की कोर में उलझे आँसू की तरह झिलझिला जाते हैं । उनका सुनहरा सपना धक्का खाकर टूट जाता है । चेहरे की झुर्रियों पर निराशा, विस्मय एवं भय के चिह्न उदित हो जाते हैं ।

बोल उठते हैं—“भई, गाड़ी वाले ! जरा सम्हल कर चलाओ अपनी गाड़ी समझे कि नहीं !...तुम्हारी गाड़ी के पहिये तो नवेली दुलहिन की तरह नखरे दिखा रहे हैं...यह देखो !...बाप रे बाप !...जरा धीरे-धीरे भाई !” मुंशी जी गाड़ी के हिचकोले से चीख पड़े—“मुंशी-आइन कसम ! तुम्हारे बैल तो बिलकुल बैल ही हैं...दौड़ते हैं तो ऐसे कि कलेजे ही पर खुर रखते हैं...गर्दभदेव की दुलत्ती भी मात इस चाल के आगे, समझे की नहीं !”

गाड़ी जब ठीकसे चलने लगी तो मुंशीजी दूसरी ओर मुखातिब हुये ।

“भई सँपेरे !...सोने लगे क्या !”

“नहीं सरकार !...अभी तो जाग रहा हूँ ।” बोला सँपेरा ।

“जागते ही रहो भाई !...डगर बढ़ी ऊँची-नीची है । कहीं बैल भड़के तो छुटक कर जमीन सँघने लगोगे...बेहतर है कि आँखों की

खिड़की खोलकर ही चलो नहीं तो साँस का पंछी बेपर का ही उड़ जायगा, समझे कि नहीं ? भूख तो नहीं लगी है !”

“भूख-प्यास तो आपको हमदर्दी से ही मिट गई सरकार !....किरपा बनाये रहे यही बहुत हैं ।” आदर के साथ बोला सँपेरा ।

“हमदर्दी से भूख तो क्या मिटेगी...अलवत्ता इन्सान खरीदा जा सकता है, समझे कि नहीं !...बाबा कालीदास ने कहा है—भूखे भजन न होई गोपाला, ले लो अपनी कंठी माला...” मुंशीजी के जबान का घोड़ा टपाटप टाप चलाने लगा—“अभी हवेली पहुँच कर तुम्हारी भूख का भूत उतार दूँगा...समझे कि नहीं ?”

“समझ गया मालिक !...कितनी दूर है अभी !”

“यही कोई एक घण्टे का रास्ता है...समझे कि नहीं !...भई, गाड़ीवान जरा तेजी ही हाँको गाड़ी...अपना मेहमान भूखा है न !” मुन्शीजी ने आदेश दिया ।

गाड़ी वालेने पट्टे बैल की पीठ पर हाथ रखा । बैल के जोड़े इशारा पाकर दौड़ पड़े । घंटी की टलमल-टुन सुनसान पहाड़ी घाटीमें गूँज उठी ।

दौड़ती हुई गाड़ी किसी पेड़ के नीचे से गुजरी । दैत्याकर पेड़ की काली आकृति देखकर मुन्शी जी की साँस नीचे-ऊपर होने लगी ! शायद डर लग गया उन्हें ! पेड़ के नीचे गिरे पत्तों पर जब पहिले दौड़े तो विचित्र तरह का भयानक स्वर पैदा हुआ ।

नीचे की खड़खड़ाहट सुनकर घोंसले में सोये परिन्दों ने जागकर अजीब ढंग से पर फड़फड़ाये, जिससे मुन्शीजी भय-एवं विस्मय से पत्थर हो गये ।

पेड़ का साया छोड़कर गाड़ी जब खुले आकाश के नीचे आई तो मुन्शीजी चैतन्य हुये ।

बोले—“पेड़ के नीचे से गाड़ी मत ले जाया करो, समझे कि नहीं !...रात में पेड़ के नीचे देवता सोते हैं ।”

“देवता तो नहीं मुंशी बाबू !....भूत-प्रेत जरूर सोते हैं ।” गाड़ी-वान था ।

“चुप रहो जी समझे कि नहीं !....तुम्हारा किराया काट लूँगा अगर रात के समय इन लोगों का नाम लोगे तो...” कहने के साथ ही मुन्शीजी खिसककर सँपेरे के पास आ गये ।

“डर लगता है सरकार !”

“न....नहीं...नहीं...ड...डर कहाँ रहा हूँ....डरे मेरे दुश्मन, समझे कि नहीं !...मुझे ऐसा-वैसा समझ लिया है क्या !....ठाकुरों के बीच में बाल सफेद हुए हैं, जो अपनी जान हथेली पर लेकर चلتे हैं कहीं...तलवारों को लड़ाई देखते-देखते दिल मजबूत हो गया है...समझे कि नहीं !...”

“खूब समझता हूँ !” गाड़ीवान बोला ।

“चुप रहो !”

मुंशीजी की डाँट से चुपचाप गाड़ीवान बैलों की पूँछ हाथ में लेकर जरा और तेज चलने का इशारा देने लगा ।

सँपेरा पहले की भाँति ही मनहूँस मनमारे बैठ रहा । वह सुनता तो बहुत कुछ था, मगर बोलता तभी, जब कोई प्रश्न उससे किया जाता !

मुन्शी के दिमाग में भूत का भूत गूँजने लगा । बेचारे रात के अँधेरे में दबी नजरों से आस-पास ताकने लगे ! दूर पर खड़े किसी पेड़ को देखकर भूत का सन्देह होने लगा उन्हें । कहीं पत्ती खड़की नहीं कि मुन्शीजी के पैर तीन कदम लड़खड़ा गये । कहीं चिड़िया बोलती तो उनकी धिन्धी बँधने लगती । वे मन का भूत भगाने की जितनी ही चेष्टा करते उतने ही जोश-खरोश के साथ भूत उनके मस्तिष्क में काले-काले बादलों की तरह उमड़ने घहराने लगते । मुन्शी जी ने होशियारी से पड़े बही-खाते को सम्भाला और सतर्क होकर बैठ गये ।

तमी—

दूर बहुत दूर से । रात के अँधेरे एवं शान्ति को चीरती हुई किसी चीज की आवाज मुंशीजी के कानों से टकरायी !

चौक पड़े वे । अपनी मिरजई की जेब से पुराना चश्मा निकाला उन्होंने । जिसकी कमानी न जाने कब ‘मनीआर्डर’ हो गई थी और मुंशीजी घागों के सहारे ही पूरी ‘छ्यंटी’ लेते आये थे । बेढंगे चश्में को हाथों से बीच नाक पर चढ़ाया किसी तरह । झपकती झिलमिलाती नजरों से वे देखने लगे ।

“थोड़ी देर बाद घोड़े की टाप सुनाई पड़ी ।

“समझे कि नहीं ? रोक दो गाड़ी ।” चीख पड़े मुंशी जो उनके स्वर में भय काँप रहा था ।

“क्यों सरकार !...कोई हाजत-वाजत ?” गाड़ीवान ने पूछा ।

“घत्त तेरे की....हाजत के बच्चे ! समझे कि नहीं ?...कोई आ रहा है इधर....वह देखो....भू...भू...भूत !” मुँह से लड़खड़ाती आवाज निकली मुंशी जी के । उनका अजीबोगरीब फ्रेम का चश्मा छटककर नाक की नोक पर अटक गया ।

मुंशीजी की चीख सुनकर गाड़ीवान ने गाड़ी रोक दी ।

उतरकर देखा उसने—मुंशीजी बेचारे भय से आक्रान्त होकर बेहोश हो गये थे । उनकी सारी देह भूकम्प के धक्के से डोलती धरती की तरह हिल रही थी ।

सँपेरे ने जब मुंशीजी की हालत देखी तो उसने उन्हें सहारा देना चाहा । उसके हाथों के स्पर्श से एकबार और तेजी से मुंशीजी चीख पड़े ।

उधर घोड़े पर चढ़ा सवार जब नजदीक आया तो उसकी काली छाया दिखाई पड़ने लगी । वह सवार तेजी से रुकी गाड़ी की ओर बढ़ता आ रहा था । गाड़ीवान ने भी देखा—भय तो उसे भी लगा, किन्तु मुकामले

छैला—२

के लिए तैयार हो गया । दूसरे हो चला उसके हाथों में तैज बख्ती चमक उठी । सँपेरे को भी उसने गँडासा यमा कर उत्साहित किया ।

तूफानी सवार तैजी के साथ झुच का फासला तय कर रहा था । जब बीस कदम बाकी रह गया इन लोगों के बीच, तो गाड़ी वाले ने कड़क कर पूछा—

“कोन हो !...वहीं खड़े हो जाओ !”

“मैं हूँ !” इतना ही बोला वह सवार ।

और गाड़ीवान के हाथ की बख्ती नीचे झुक गई । पता नहीं कौन-सा जादू भरा था उस—“मैं हूँ” में ।

सवार गाड़ी के पास आकर रुक गया । बोला—“सँपेरे ! मेरे साथ आओ !”

और उसकी आज्ञा के साथ ही सँपेरा घोड़े की पीठ पर सवार हो गया ठीक उसके पीछे ।

और फिर—

और फिर उस विचित्र सवार ने घोड़े को षँड़ लगाई । घोड़ा आँधी की तरह अन्धा होकर भाग चला महुवारी ग्राम को ओर ।

गाड़ीवान ताकता ही रह गया । उससे कुछ करते न बना ।

जब सँपेरे को लेकर वह सवार अन्धेरे में खो गया तो गाड़ीवान मुंशीजी की परिचर्या करने लगा ।

“मुंशी बाबू ! अरे ओ मुंशी बाबू !...उठो भी !” हाथों से गठरी हुए मुंशीजी को सीधा करने लगा गाड़ीवान ।

“अरे ! भई, मु....मुः...भू भूत...अरे...मु...मु...मुझे नहीं किसी और को...किसी और को...समझे कि नहीं !...!...मैं तो बूढ़ा हूँ ।” मुंशीजी आँखें बन्द किये ही बोले । उन्हें लग रहा था कि भूत ने ही आकर पकड़ा है ।

छैला—२

“उठो भी सरकार !...आधी रात हो गई है...सुबह-सुबह बड़े राजा हवेली में नहीं देखेंगे तो फाँसी पर लटका देंगे समझे कि नहीं ?”

किसी प्रकार मुंशी महोदय ने डरते-काँपते अपनी आँखें खोलीं । देखा तो सामने गाड़ीवान खड़ा था । जान में जान आई ।

“उठो सरकार !”

मुंशीजी उसकी वाणी में साहस देखकर स्वयं कुछ स्वस्थ हुए और उठकर बैठ गये ।

“समझे कि नहीं ?” मुंशीजी के गले से निकला—“अरे कहाँ गया सँपेरा का बच्चा !...समझे कि नहीं ?”

“उसे तो भूत ले गया माई-बाप !...बहुत खुशामद करके बचाया तुम्हें ?” बोला गाड़ीवान ।

“चलो बड़ा अच्छा किया तुमने, समझे कि नहीं ?...तुम्हें इनाम दूँगा...वह मरना भी तो चाहता था शैतान !...चीखा भी था इतने जोर से कि मैं ही बेहोश हो गया ।”

“चीखे तो तुम ये सरकार !”

“समझे कि नहीं ?...झूठ मत बोलो...भला मैं क्यों चीखने लगा ?” मुंशीजी शान से बोले मानो शेर का शिकार करके आये हों । किन्तु अभी उनके अन्तर में भय तम्बू ताने बैठा था—जरा जल्दी ले चलो समझे कि नहीं ?...नहीं तो उल्लू का पछा कहीं फिर न आ जाय ।”

“लो सरकार ! वह तो फिर आ गया...भला तुम बुलाओ और भूत न आये...क्या कहने !”

सामने की ओर उँगली से दिखाता हुआ बोला गाड़ीवान ।

मुंशी जी के कान खड़े हो गये ! उन्होंने सुनी घोड़े की टाप ।

“बाप रे बाप !...समझे कि नहीं ?...जल्दी से कोई उपाय करो ।” मुंशीजी की नानी मरने लगी ।

छैला —

“गाड़ी के नीचे सो जाओ सरकार !”

“कहाँ तुम्हारे बैल भड़क-वड़क गये तो...समझे कि नहीं ? सस्ते ही मैं चला जाऊँगा...पहिये के नीचे ही टें बोल जाऊँगा...समझे...”

“समझा मालिक !...इधर आओ पुआल से ढाँक दूँ ।”

“यह ठीक है...समझे कि नहीं !...लो ढाँक दो...जल्दी से ।”
मुंशी जी पेट में सर घुसा कर लेट गये ।

“हिलना-डुलना नहीं सरकार !”

“समझे कि नहीं ? रत्ती भर भी न हिलूँगा...लो बिलकुल चुप हो जाता हूँ...साँस भी नहीं लूँगा ।”

मुंशी जी दम साधे, जीने की तमजा लादे, खामोश होकर पुआल के नीचे पड़े रहे ।

विचित्र सवार इस बार आया तो रुका नहीं । तेजी के साथ पहाड़-पुर की ओर भाग गया । सँपेरा अब तक उसकी पीठ के पीछे था ।

इस बार गाड़ी वाले ने मुंशी जी को जगाया नहीं । गाड़ी पर वे ज्यों की त्यों पड़े रहे ! गाड़ी धीरे-धीरे जाती रही ।

सन्नाटे को चीर कर कभी-कभी किसी भिरही पपीहे की दर्द भरी चीख वातावरण में काँप उठती थी ।

रचना ने अपना इरादा बदल दिया है। वह जीयेगी अब। अब तो उसकी विमारी काफी सम्हल चुकी है। कल से तो पेट में पीड़ा की घड़कन भी नहीं हुई।

उसका दर्द तो कम हो गया है, किन्तु फूला हुआ पेट पचकने का नाम नहीं लेता। पेट का पाप अपना मस्तक झुकाना नहीं चाहता, देश पर मिटने वाले क्रान्तिकारियों की तरह।

अब क्या करे बेचारी !

पञ्जग पर पड़ी है व्यग्र और चिन्तित होकर। कल डाक्टर को लेकर सजल भैया आ जायेंगे और जो बात सिर्फ परोसन दादी को ही मालूम है वह दो व्यक्तियों के चार कानों में घुस जायेगी।

भैया भले उसके पाप के बारे में सुनकर चुप भी रह जाँय। मगर डाक्टर भला क्यों चुप रहेगा ! उससे उसका सम्बन्ध ही क्या ! उसके खानदान की इज्जत चाहे सड़क की भूल बने या पनारे का गंदला चल, डाक्टर को इन बातों से क्या वास्ता !

तब ?

डाक्टर से बचने का उपाय क्या हो सकता है ? एक-आध रोज़ और डाक्टर नहीं आये तो कितना अच्छा रहे ! जहाँ परोसन दादी ने दो-चार खुराक और दवा पिलायी कि पाप का मस्तक कटकर नीचे गिर जायेगा ।

तभी परोसन दादी कटोरी में कुछ लेकर उपस्थित हो गई । उसकी उपस्थिति ने रचना के डगमगाते हृदय को आपर साहस दिया । वह उठकर बैठ गई ।

“क्या है दादी ! जहर तो नहीं ?”

“हाय राम-हाय सीता ! ओछी बात क्यों बोलती है री !” प्यार की भीड़की देकर कहा परोसन दादी ने—“ले दूध के साथ बुढ़िया की गोली मिला दी है मैंने—पी ले...सारा किस्सा समाप्त हो जायगा...”

“तुम बुढ़िया की गोली पिलाओ दादी ! कल मैया आकर बन्दूक की गोली दागेंगे” बोली वह—“गोली तो दोनों है न दादी !... किन्तु दोनों में कितना बड़ा अन्तर, कितनी बड़ी असमानता...एक के खाने से जीवन, दूसरे के खाने से मौत !”

“तू पागल हो गई है बेटी ! भगवान भला करेगा !...हाय राम-हाय सीता ! मेरे रहते किसकी मजाल कि तेरी जान ले ले ! मुँह नोच लूँगी मैं तेरा गला घोटने वाले का...नींद को झूले पर झुला-झुलाकर तुझे इस लिए जवान नहीं किया कि कोई आकर मेरी नींद ही हराम कर दे...हाय राम-हाय सीता !” एक साँस में कह गई परोसन दादी । उसका चेहरा तमतमा उठा ।

“तुम ऐसा नहीं कर सकती दादी ।” रचना के स्वर में सन्देह था ।

“कैसे भला ?”

“इसलिये कि जितना तुम मुझको चाहती हो उससे अधिक मैया

छैला—२

को चाहती हो...मैया ही तो गोली मारेंगे !...कहना आसान है करना बहुत कठिन !”

“देख रचना ! मेरी परीक्षा मत ले !...मेरी ममता में इतनी ताकत है अभी कि बेटे का हाथ पकड़ सके !...हाय राम-हाय सीता ! बूढ़ी हो गयी तो क्या...बन्दूक की गोली पहले मेरी ठठरी में घुसेगी...” कहा परोसन ने—“ले पी ले दवा !”

परोसन के आश्वासन से उत्साहित होकर रचना दवा पी गई । किन्तु डाक्टर का भय सताता ही रहा उसे ।

“डाक्टर आयेगा दादी तो...”

“हाय राम-हाय सीता !...तू तो बड़ी डरपोक निकली बेटा !...बच्ची थी तो आग से खेलने दौड़ती थी...बड़ी हो गयी है तो हवा से भी भय खाती है...मेरे जीते बी कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकेगा...बगैर कहे सजल कैसे दिखायेगा डाक्टर को...तू चिन्ता मत कर रचना !”

“मेरी अच्छी दादी !...बड़ी अच्छी दादी !” हर्षातिरेक से विह्वल होकर रचना ने परोसन दादी को अपने से लिपटा लिया और माला बन गई उसके गले की ।

“हाय राम-हाय सीता !...क्या कहती है पगली !...अब मैं अच्छी कहाँ !...जवानो में देखती तो कहती, अब तो बूढ़ी हो गई हूँ चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गई हैं, काली घटा से बाल मैदा की तरह सफेद हो गये हैं...कमर टूट गई अब तो...”

“ऐसी जवान थी दादी तू !...” अपने में खोकर बोली रचना—
“तब तो कमर नागिन की तरह लहर खाती होगी....ठीक कहती हूँ न दादी !...पाँव जमीन पर नहीं पड़ते होंगे तुम्हारे—क्यों !”

“हा रे हॉ ! मगर फिसलते नहीं थे कभी...हाय राम-हाय सीता !”

छैला—२

आज की छोकरीयों को जवानी क्या आ जाती है काई की तरह फिसलने लगती हैं अपने को ही देख—कितना बुरा किया तूने !”

परोसन दादी का छोड़ा तीर रचना के कलेजे में आकर लगा सीधे । वह गंभीर हो उठी । उसे अपनी भूल मालूम हुई ।

“अरे तू तो फूल उठी !...मैं तो हँसी कर रही थी ।”

“हँसी-हँसी में ही लोग जान ले लेते हैं दादी !...मारना चाहती हो तो एक ही बार गला काट लो....धीरे-धीरे रेतती हो !...किसी को सताना अच्छा लगता है क्या तुम्हें !” बोलते-बोलते रचना का गला भर आया ।

“लो—हाथ राम-हाथ सीता !...यह तो बात का बतंगड़ बना लेती है सारा दोष अपने सर ही मढ़ लेती है !” परोसन दादी ने रचना को अपनी गोद में खींच लिया । स्वर से अपनत्व भर कर बोली “तुम्हें मारूँगी भला क्यों !...अभी तो तेरे हाथ पीले करने हैं...चाँद सा दुब्हा ला दूँगी तुम्हें ! सोने की पालकों में फूल सी गमकती जावेगी तू...”

“चुप रहो दादी !” रचना ने दाहिने हाथ से परोसन का मुँह बन्द कर दिया । और लज्जा एवं रलानि से भौंगा मुखड़ा छिपा लिया उसकी गोद में ।

अजीब है परोसन दादी भी । कभी व्यंगके तीर से रचना को घायल भी कर देती है और कभी प्यार-दुलारके मरहमसे अच्छा भी कर लेती है ।

शादी की बात से रचना के हृदय में गुदगुदी तो उठी किन्तु क्षणिक ।

जब वह गंभीर होकर अपने अतीत के विषय में कुछ सोचने लगती है तो कुछ दिखाई नहीं पड़ता । जब वर्तमान पर गौर करती है तो उसका छोटा-सा मासूस दिल करुणा से भर उठता है और उसे अपना उज्ज्वल भविष्य अधकारमय प्रतीत होने लगता है ।

कितनी जटिल उलझन रचना के मस्तिष्क में समा गयी है कि सुलझाना चाहती है तो उलझती ही जाती है ।

होने वाले पति को अगर 'उसके पाप की बात मातूम हो जायगी तो क्या उसे अपनायेगा ?

कभी नहीं !

किसी पुरुष का सबल हाथ, निरोह, निर्दोष नारी की छोटी-सी भून को फूल समझ कर अपना नहीं सकता ।

रचना की गम्भीरता बढ़ने लगी । उसके शान्त मुख-मण्डल के पीछे एक भयानक तूफान की सृष्टि होने लगी । उद्वेग से मस्तिष्क फटने लगा । बिघर देखती उधर ही अमा की रात काला भुँद बाये गला घोटने के लिये तैयार दीखती ।

“चुप क्यों हो गई तू !...अभी से लजाने लग गई लजवन्तो !... हाय राम-हाय सीता ! कौन जिन्दा रहेगा तेरी इस अदा पर ।”

“चुप रहो दादी !...चुप रहो...मैं नहीं सुनना चाहती यह सब !” असीम वेदना निहित थी रचना की आवाजमें । जिसे परोसन दादी समझ न सकी । उसने समझा केवल कि रचना लज्जा से लाल हो उठी हैं ।

“दादी ! मुझे एकान्त में छोड़ दो...मेरा सर फटने लगा है ।”

“तू मरे और मैं छोड़ दूँ....पगली !”

“पागल भी हो जाती तो अच्छा रहता दादी !...कम से कम वर्तमान की स्मृति मस्तिष्क में कोई तूफान, कोई चिन्ता तो पैदा नहीं कर पाती....समझ गई मैं जो मरना चाहता है उससे मौत भी नफरत करने लगती है....”

वह पलंग पर विचित्र होकर पड़ी रही । आँखों से गरम-गरम आँसु की बूँदें झुकक कर उसके कमल-कपोल को नहलाने लगी ! गले पर हिचकियों का दर्द भरा सरगम भी बोल उठा ।

हिचकी की आवाज ने परोसन दादी के मन में अशान्ति भर दी ।

बोली—“रो-रो के जान दे, हाथ राम-हाथ सीता !...”

किन्तु रचना कुछ बोली नहीं । समय धीरे-धीरे खिसकने लगा । रचना रोती-रोती कब सो गई पता नहीं । परोसन दादी सर पर हाथ रखे कुछ सोचती रही ।

दिन की धूल उड़ते उड़ते शाम की गोधूली बन गई । जमीनोआस-मान की जोड़ पर चमकता आफताब लापता हो गया । आकाश में परिन्दों के पंख खिल उठे । सभी दिन भर की थकान के बाद अपने-अपने बसेरे की ओर उड़ चले । ढेरों को हॉकते किसानों के छोकरे जंगल की हरियाली छोड़कर गाँव की तरफ चल पड़े । नाँद पर बैंधे बछड़े दूर से ही गायों को देखकर रँभाने लगे ।

शिवाले में घण्टे घड़ियाल घनघना, टनटना उठे । सांध्य दीप की आँखें खुल गई ।

पर रचना आँखें बन्द किये पड़ी रही पलंग पर । शाम थोड़ा और आगे बढ़कर रात बन गई । उधर रात का अँधेरा गाढ़ा हो रहा था इधर रचना के मन का अँधेरा बढ़ता जा रहा था ।

परोसन दादी ने लालटेन जलायी । कमरे का अँधेरा काँपकर बाहर भाग गया ।

लालटेन की फीकी रोशनी में देखा परोसन ने ।

बेखबर सोयी थी रचना ।

साँस की हर लहर पर उसकी छाती नीचे-ऊपर हो रही थी । चेहरे पर उदासी की परत पड़ी थी । गुलाब-सा खिला चेहरा मुरझाकर पीला हो गया था । गालों पर आँसू की सूखी लकीरें करुण अदा से मुस्करा रही थीं, बाजू पर खिंची पानी की लकीर की भोंति ।

रचना की अस्त-व्यस्त हालत देखकर परोसन दादी बेहाल हो उठी ।

छैला—२

“रचना बेटी !...उठो शाम हो गई ।”

एक ही पुकार में रचना ने धीरे-धीरे अपनी आँखें खोलीं । लाल रंग उसकी आँखें और दिन तो घंटों जगाने पर भी नहीं जागती थी वह ।

बोली—“शाम हो गई दादी !...अब रात भी हो जायगी ।”

“चल उठ बाहर बाग में बैठ तनिक...भीतर रहते-रहते मन ऊब गया होगा तैरा ?...” परोसन दादी सहारा देकर उठाने लगी ।

“जिन्दगी भी ऊब गई है दादी ! जीने की साध नहीं ।” सहारा लेकर उठती हुई बोली वह ।

बाग में आकर पत्थर के एक चबूतरे पर बैठ गई ! चारों तरफ से सौरभ भरा पवन उठ-उठकर वातावरण को सुरभित कर रहा था । किन्तु रचना को कोई रस नहीं मिला उसमें । फूलों का स्पर्श काँटों से भी तोखा प्रतीत हुआ उसे खुशबू नाक में बदबू बनकर घुसने लगी । उसका दिमाग भला उठा ।

फुलवारी का साथ छोड़ कर उठ खड़ी हुई वह ।

उठकर पत्थर से बने कुएँ को जगत पर आ बैठी ।

आँखें गड़ाकर गहरे कुएँ के भीतर काँपते अंधकार को निहारने लगी उसके अन्तर में एक भाव उदित हुआ ।

अगर कुएँ में कूद पड़े तो !

सफ़र करती रात अपना आधा रास्ता तय कर चुकी है। छोटी-सी रियासत महुवारी का कोलाहल नीरवता में परिवर्तित हो गया है। सारा गाँव दिन भर की थकान के पश्चात् आँखों में नींद का काजल लगा कर सो रहा है। जाग रहे हैं तो सिर्फ वे जिन्हें रात को पहरा देने के लिए सजल ने तैनात किया है। लेकिन ये पहरेदार भी रात की शान्ति में खलल डालने की जुर्रत नहीं कर रहे हैं। सिर्फ आँखों का पट खोले सतर्कता के साथ आँधरे में इधर-उधर देख रहे हैं। पत्ते की खड़खड़ाहट से ही चौंक कर जीने मरने के लिये तैयार हो जाते हैं।

ऐसे ही वक्त में—

गाँव की शान्ति भंग हो गई।

गाँव के दूसरे छोर से कुत्ते के भौंकने की आवाज रह-रह कर आने लगी। पहरे पर के लठैत सावधान हो गये।

तभी—

छैला—२

घोड़े की टाप सुनाई पड़ी और उसके पीछे-दौड़ते कुत्ते की आवाज ।
घोड़ा-दौड़ता हुआ आकर हवेली के फाटक पर रुका । खटैत ने
हुकम भरे लहजे में पूछा—“कौन ?....”

“मैं हूँ ।” कहते-कहते घोड़े पर चढ़ा आदमी उसके पास आ
गया—“फाटक खोलो जरूरी काम है ।”

फाटक खुल गया । सवार उतर पड़ा । एक व्यक्ति और था
उसके साथ ।

सवार के भीतर जाते ही कुत्ते पूँछ हिलाते पीछे भाग गये ।
दोनों व्यक्ति हवेली के भीतर प्रविष्ट हुये । घर का दरवाजा खट-
खटाया पहले व्यक्ति ने ।

भीतर सो रही थी परोसन दादी और रचना ।

परोसन दादी तो खाट पर पड़ते ही बिस्तर हो गयी थी । नींद में
उसकी नाक फों-फों कर रही थी । किन्तु रचना अब तक बेचैनी से
करवटें बदल रही थी । वह शान्ति चाहती थी और उसे शान्ति नहीं
मिली तो अशान्ति बढ़ने लगी । अपने भविष्य के बारे में सोचती
तो बिलकुल अँधेरा दिखाई पड़ता उसे । और तब उसके दिमाग में
तूफान उठने लगता । दिल का स्पंदन बढ़ने लगता । मजबूरी केवल यही
थी कि बन्द नहीं हो रही थी चलती सोंस ।

किवाड खटखटाने की आवाज जब उसके कानों के पर्दों से टक-
रायी तो चौंक पड़ी वह ।

कौन हो सकता है इतनी रात बीते ?

इस बार खटखटाने वाले ने पुकारा भी, उसी का नाम लेकर ।

स्वर परिचित लगा ।

और अपने परिचित से भला कैसा डर ! चाहे वह रात में चोर की
तरह आवे या दिन के उजाले में शरीफ बन कर ।

रचना ने काँपती निगाहों से सोयी परोसन को देखा । जब उसे विश्वास हो गया कि जागी नहीं है तो उठी और हाथ में लालटेन लेकर चल पड़ी दरवाजा खोलने, बड़ी सावधानी के साथ ।

लेकिन सावधानी से चलने पर भी राह में पड़ी किसी वस्तु से रचना के सतर्क पैर टकरा ही गये । झन-झन की आवाज हुई ।

जरा से ही स्वर से बुढ़िया परोसन दादी की नौद भी झनझना कर उखड़ गई, तूफान के झोंके से जिस प्रकार पेड़ उखड़ जाता है ।

“बिल । बिल !” परोसन दादी का निद्रालु स्वर था । उसने सोचा कि किसी बिस्ली की कारस्तानी है ।

जब उसने नौद भरी आँखों की मद्धिम रोशनी से गलियारे की ओर देखा तो प्रकाश दिखाई पड़ा । घबड़ा उठी वह ।

“रचना ! अरी ओ रचना !...हाथ राम-हाथ सीता !...सोती भी तो...” कहते-कहते अँधेरे में उसने रचना का बिछावन टटोला, किन्तु रचना कहाँ थी वहाँ । वह तो अपने परिचित से मिलने चल पड़ी थी ।

परोसन दादी के पाँव डगमगाये, कलेजा काँपा ! बाहर झाँक कर देखा उसने तो बिस्ली के स्थान पर जाती हुई सतर्क रचना दीख पड़ी ।

यह क्या देख रही है परोसन दादी !

तो क्या रोज-रोज रचना रात की कालिमा में किसी से मिलने जाती है । और इसी मिलन का परिणाम पेट का पाप है ।

वह आज पता लगायेगी, देखेगी वह—उसका प्रेमी आकाश का है या जमीन का चोर !

दबे पाँव उसका पीछा करने लगी वह ।

रचना को इस बात की कोई खबर नहीं । वह तो थी बेसुध ।

रचना ने दरवाजा खोला । हाथ की लालटेन नीचे रख दी । अपने परिचित को देखकर बोली—“तुम !”

छैला—२

वह बोला—“मैं ही हूँ रचना !” घबड़ाया स्वर था उसका !

“इतनी ही रात को...और भैया !” रचना को लगा जैसे कोई दुर्घटना हो गई हो ।

“कुछ मत पूछो !...ठाकुर साहब की जिन्दगी और मौत का सवाल है...वक्त कम है और सफर लम्बा...थोड़े में जल्दी से सुनो !” कहने लगा वह धीरे-धीरे ।

परोसन ने सुना तो उसके पैर के नीचे की धरती खिसक गई । और अधिक नहीं सुन सकी वह ।

उधर व्यक्ति रचना से बातें बताता जा रहा था ।

व्यक्ति बाहर के आँधरे में खड़ा था इसलिये उसकी आकृति अस्पष्ट थी ।

जो कुछ कहा उस व्यक्ति ने उसे सुनकर घबड़ा उठी रचना । कुछ ऐसी बात थी वह कि रचना के दिल की धड़कन बढ़ गई । पेट का दर्द फिर उठकर खड़ा हो गया । अपना पेट दाबे रह जमीन पर बैठ गई ।

उसके होठों से नैराश्यपूर्ण, करुणाद्रं, बोझिल स्वर निकला ...“अब क्या होगा ?”

“जो भगवान चाहेगा !...घड़े राजा की जिन्दगी उस पर निर्भर है...अगर वह चाहे तो बचेंगे नहीं तो मरे तो हैं ही...मैं जाता हूँ अब !...मुझे पहाड़पुर पहुँचना है ।”

“कौन है वह ?”

“आने पर बताऊँगा !...अभी समय नहीं है ।” कहकर विचित्र व्यक्ति बाहर निकला, घोड़े पर सवार हुआ और उसके साथ का आदमी उसके पीछे बैठ गया ।

घोड़ा दौड़ चला ।

छैला—२

रचना के मुख से चीख निकली । जैसे उसका गला दबा दिया हो किसी ने ।

दूर पर खड़ी परोसन ने सुना तो उससे रहा नहीं गया । वह दौड़कर पास आयी । रचना पेट दाबे आहें भर रही थी ।

“क्या हुआ रे रचना !...हाय राम-हाय सीता !...यहाँ क्या कर रही है इतनी रात को !...” ऐसे बोली परोसन दादी कि कुछ देखा ही नहीं उसने ।

“दादी ! भीतर ले चलो...लगता है अब प्राण निकलता !”

भीतर आई तो—

“कौन था वह रचना !...तू तो कहती थी किसी से प्रेम नहीं करती...खूब कालिल पोती तूने खानदान के मुँह पर...” परोसन के दिल का मलाल बाहर निकल आया ।

“चुप रहो दादी !...बेकार की बातें मत करो...देखानहीं तुमने !...आह !...मैंहूँ था वह !...दादी मैं नहीं बचूँगी ! पेट फटा जा...रहा है दा...दी !” लड़खड़ाती आवाज थी रचना की । कुछ देर बाद फिर कहने लगी—“भैया को साँप ने काँट लिया...वे नहीं...बचेंगे...अब...उन्हीं की आज्ञा से...इतनी रात को...आया था...वह ।”

परोसन पर हिमालय का एक टुकड़ा आ गिरा । सबल को साँप काटने की बात ने और इधर रचना के पेट ने हैरान कर दिया उसे । कितनी बड़ी आफत थी यह बूढ़े दिल के लिये ।

एक ही तीर में दो शिकार खेलना चाहती थी मौत !

उफ् !

रचना छुटपटा-छुटपटा कर बेहोश हो गई । परोसन को होश रहते बेहोशी आ गई थी । अब क्या करे बेचारी, सिर्फ रचना का पेट सहला रही थी ।

मौत भी कितनी बड़ी नादानी करती है कभी कभी कि बूढ़े को छोड़ कर जवान शरीर को खाद्य बना लेती है ।

हाहाकार आँखों में आँसू लिये बूढ़ी परोसन दादी अत्यधिक विकल हो उठी थी ।

बड़ी अभागिन है बेचारी ! जीवन का सुख कभी नहीं मिला उसे । नयनों के नीर हमेशा पीर ही उगलते रहे । आज भी वही क्रम है और पहले भी यही था ।

चिन्ता की ज्वाला से प्रज्वलित हो रही है वह । दग्ध हृदय मन-ही-मन अपनी शक्ति की होनता पर दुःख प्रकट कर रहा है । अगर उसमें शक्ति होती तो क्या मजाल थी कि तकदीर का एक काँटा भी इस खानदान के दामन में उलझ सकता ।

वह अबला नारी है । साथ-साथ बुढ़ापे ने रही-सही शक्ति भी छीन ली । अंगों में क्षमता होती तो इस समय भी मुकाबला करने के लिये तत्पर हो जाती, किन्तु अब तो उसका जीवन सीमित दायरे में कैद हो गया है । क्या करे वह, किसको पुकारे ?

किसी को पुकारना तो पड़ेगा, नहीं तो रचना की हालत सुचरेगी कैसे !

आज जो होना होगा, होगा ही । बदनामी ही सही ।

परोसन डगमगाते पगों से किसी को पुकारने के लिये बाहर निकलने लगी ।

तभी—

“समझे कि नहीं !...अरे रे !...भौंक-भौंक के कान क्यों फाड़े जा रहा है...पाजी कहीं का !...कुत्ता-कुत्ता ही रह गया...रोको भाई गाड़ी वाले ! यह तो काट खायेगा मुझे...सालों को इतना खाना मिल जाता है कि आँखों पर चर्बी बढ़ती जा रही है, समझे कि नहीं !....अपने बाप

छैला—२

को भी नहीं पहचानते...दीनू, चतुरिया, ठीगू !...कोई नहीं...अब सब के सब मर गये क्या या जी भी रहा है कोई ?...” मुन्शीजी का बेदंगा ढाँचा देखकर कुत्ते भौंकना बन्द नहीं कर रहे थे । बार-बार वे छाते से कुत्तों को घमका रहे थे ।

लठैतों ने अपना-अपना नाम सुना तो हाथ जोड़े सामने आकर खड़े हो गये ।

“सब मर गये थे क्या या कान में तेल डालकर सो रहे थे ?...” सबकी तनखाह काट लूँगा...समझे कि नहीं ?” मुन्शी जी क्रोध से विफरते हुए बोले ।

“माफ़ करो मुन्शी बाबू ! जरा झपकी लग गयी थी माई-बाप !...” सुनते ही नींद झटकार भागा हूँ सरकार !....तुम्हारी कलम की कसम ! खाली पैर उड़ता आया हूँ ।”

“उधने की आदत बहुत बुरी है, समझे कि नहीं ?....पंख कटवा डालो ।”

“अच्छा सरकार !”

“वह चबूतरे पर कौन सोया है शैतान !”

“ठीगू हैं मुन्शी बाबू ! जगाने लगा तो बोला—बीबी कसम ! बीबी का सपना देख रहा हूँ अभी...उसे सोने दो मालिक !” चतुरिया बोला ।

“अरे ओ ठीगू के बच्चे !...पहरा देता है या बीबी का सपना देखता है...” छाता कौंचते हुए बोले मुन्शी जी ।

हड़बड़ा कर जाग पड़ा ठीगू । बोला—“कौन है बे !”

“अबे ! उठता है या हूँ ऊपर एक-दो...समझे कि नहीं ?”

“आप हैं सरकार !” मुन्शी जी को देखकर बोला वह—“बीबी कसम सरकार ! आपका ही सपना देख रहा था बहुत दिन जियोगे माई-बाप !”

“मुन्शी लाला !” तभी किसी ने चीख कर पुकारा ।

छैला—२

मुंशीजी चीत्कार सुनकर नीचे से लेकर ऊपर तक सिहर उठे ।

देखा उसने, बरामदे में खड़ी थी परोसन !

“भाभी ! इतनी जोर से चीखती हो कि आसमान ही फट जाय, समझे कि नहीं ?...जरा धीरे-धीरे ।” मुंशी जी कहते हुए परोसन की ओर बढ़े । उन्हें आश्चर्य हुआ इतने सबेरे परोसन को जागते देखकर ।

“आसमान तो फट ही गया मुंशी लाला ! अब तो जमीन फटने की देरी है...हाय राम-हाय सीता !” हाँफने लगी थी बेचारी ! साँस लेकर फिर पूछा उसने—“ठाकुर बेटा का हाल कहो कुछ कैसा है !... कहाँ है ?” एक ही साँस में पूछ गई वह ।

“अजीब सवाल है, समझे कि नहीं ?....पहाड़पुर में है...ठीक है और कैसे है ?” मुंशी जी ने सरल भाव से कहा ।

“अरे उसे तो साँप ने डँस लिया मुंशी लाला !...अभी-अभी मँहँगू आया था । वही कह गया है....रचना पेट पीड़ा से बेहोश हो गई है—हाय राम-हाय सीता !...घर का घर उजड़ना चाहता है मुंशी !”

सुना मुंशी जी ने तो उनके पैरों के नीचे की घरती भागने लगी । हाथ का छाता छूट कर जमीन पर गिर पड़ा । बेचारे चिन्ता कुल होकर डगमगा उठे । खड़े नहीं रह सके तो धीरे से जमीन पर बैठ गये, शरीर शिथिल हो गया ।

मुंशी जी दुविधा में पड़े थे । उन्हें यकीन नहीं हो रहा था इन बातों पर ।

“मुंशी लाला ! कोई इन्तजाम करो, शहर जाकर डाक्टर बुला लाओ...रचना की उम्मीद टूटती जा रही है...उसे बचालो...”

“क्या बकती हो भाभी !...समझे कि नहीं ?...तुमने सपना तो नहीं देखा है या...”

“नहीं मुंशी लाला !...भीतर जाकर देखो तो...”

छैला—२

“देखने की बात क्या है अभी गया शहर !...गाड़ी वाले !... समझे कि नहीं शहर जाना है...” मुंशीजी भी घबड़ा उठे, जब उन्हें विश्वास हो गया । अपने को सम्भाला उन्होंने ! कर्तव्य के वक्त बेहोशी ठीक नहीं ।

“अपने को सम्भालो भाभी ! समझे कि नहीं ?...तुम्हीं होश खो बैठेगी तो रचना की बेहोशी को सहारा कौन देगा !...मैं डाक्टर लेकर अभी आता हूँ....गाड़ी वाले शहर ले चलो...अभी, इसी वखत !”

कहते-कहते तेजी से उछल कर गाड़ी पर बैठ गये मुंशीजी । उनकी फुर्ती देखने लायक थी इस समय । अकर्मण्यता त्याग कर कर्मण्य हो उठे थे वे ।

महुवारी से शहर करीब डेढ़ मील दूर था ।

गाड़ी भाग चली शहर की ओर । मुंशीजी जोश दिलाते जा रहे थे । रचना के जीवन का प्रश्न था ।

“क्या बात है सरकार !” साहस करके गाड़ीवान ने पूछा ।

“बात को मारो गोलो...समझे कि नहीं !...तुम हाँकते चलो...घोड़े की चाल से चलो...आँधीकी तरह लौट आओ...समझे कि नहीं !...तुम्हें इनाम दूँगा....”

मुँह अँधेरे ही मुंशीजी शहर से डाक्टर लेकर लौटे ।

डाक्टर ने रचना को देखा । उसकी नाड़ी देखी । गति में विशेष अन्तर नहीं था । बेहोशी दूर होने की दवा दी । चैतन्य हुई रचना तो चीख पड़ी—“भैया !”

मगर भैया की जगह मिला डाक्टर ! चकित रह गई । अगल-बगल भाँका । एक तरफ मुंशी मुँह लटकाये, चेहरे पर ‘समझे कि नहीं’ का भाव लिये, दूसरी तरफ परोसन दादी थी ‘हाय राम-हाय सीता !’ की गम्भीर मुद्रा बनाये ।

छैला—२

रचना की आँखें खुलने पर परोसन दादी खिल उठी । मुंशीजी की नाक में अटकी साँस भीतर गई, फिर बाहर आई । उन्हें सान्त्वना मिली ।

रचना परिस्थिति समझ गई ।

सामने डाक्टर खड़ा था ।

अब तो उसके पाप का भन्डा फूटेगा ।

“जीभ दिखाओ बेटी ।” बूढ़े डाक्टर का गम्भीर स्वर था ।

“पहले भैया को देखिये डाक्टर साहब !...वे मर रहे हैं...उनके वगैर मैं नहीं जो सकती ।” रचना थी यह, खोयी-अधमरी-सी ।

“वे ठीक है बेटी ।” डाक्टर ने झूठी तसल्ली दी ।

रचना ने अपनी जीभ बाहर निकाल दी । आँखें बन्द कर ली ।

डाक्टर ने ‘पॉकेट टार्च’ की रोशनी में निहारा तो चौंक पड़े । उनके चेहरे पर की गंभीरता और भी गंभीर हो उठी । रचना की जीभ के उपर चितकबरे चिह्न बने थे । जीभके बाद डाक्टरने पेट दिखाने को कहा ।

रचना पशोपेश में पड़ गई । अब उसका पाप दुनिया के सामने आकर बोल उठेगा ।

उसने आँखें मूँद ली नीचले होठों को दाँत के नीचे दबा लिया । जैसे साहस बटोर रही हो वह ।

डाक्टर ने पेट पर का कपड़ा हटाकर देखना प्रारंभ किया । जीभ बैसा निशान ही पेट पर हलकी आभा लिए उगा था । दो-चार बार पेट दबाया डाक्टर ने ।

“ठीक है” कहकर डाक्टर फारिग हो गये ।

डाक्टर साहब बैठक में आये । परोसन और मुंशी भी वहीं थे ।

“क्या बात है डाक्टर साहब !...आप साफ-साफ कह जाइये, समझे कि नहीं !...”

“बच्ची के पेट में साँप है....”

छैला—२

“क्या !” मुंशी और परोसन के मुख से आश्चर्य भरा प्रश्न निकला ।

“जी हों, उसके पेट में साँप है...पेट का आपरेशन करना पड़ेगा... नहीं तो खून खराब हो जाने का भय है....जल्दी नहीं की जायगी तो मौत !....यहाँ पर कुछ नहीं हो सकता...जीजिये यह दवा कुछ फायदा करेगी...” कहकर डाक्टर चलने के लिये उठे ।

परोसन दादी और मुंशी का दिमाग चक्कर खाने लगा पेट में साँप का बच्चा होने की घटना उनके लिये बिलकुल नवीन थी ।

पूर्वाकाश पर सुबह की लाली छा रही थी और इधर हबेनी में अँधेरा छाता जा रहा था ।

महँगू सँपेरे को लेकर पहाड़पुर पहुँचा सही, किन्तु उसके पहुँचने के पहले ही गाँव के लोग सजल को सेदहॉ ले जा चुके थे । जहाँ साँप का विष सिर्फ छूकर ही छूमन्तर कर दिया जाता था । भला अपने राजा की स्थिति देखकर गाँववाले कब तक सँपेरे के मन्तर का इन्तजार करते ।

सँपेरा रास्ते भर मन ही मन खुश हो रहा था कि भला राजा साहब का उपकार करने का मौका तो मिला उसे । मगर यहाँ आने पर बड़ी निराशा मिली !

“सेवा करने का बखत आया तो समय ही बीत गया । उस्ताद कसम ! बड़ा अभागा हूँ मैं !...” बोला सँपेरा—“सेदहॉ ले चलो भाई !...मैं भी तो देखूँ कि बिना मन्तर पढ़े वहाँ जहर उतरता कैसे है....अगर साँस का पंछी उड़ा नहीं होगा तो बचा लूँगा मैं...इतनी ताकत है मुझमें ।”

महँगू का घोड़ा तीर की तरह, हवा का तैजी लिये सेदहॉ की ओर दौड़ पड़ा ।

दौड़ता रहा ।

दो आदमियों का बोझ लादे घोड़े की चाब बोझिल होने लगी, मगर महेँगू की इसकी परवाह नहीं । शिथिल घोड़े को कोड़े मार-मार कर उसकी चाल में तेज़ी भरने लगा वह ।

इस समय घोड़े की जान की कीमत उसके समक्ष कुछ भी नहीं । घोड़ा भले ही मर जाय—मंजूर है उसे । किन्तु उसके मालिक की जिन्दगी खतरे से खाली हो जाय, यही तमन्ना है उसकी ।

×

×

×

पुकारने के लिये तो छोटी पहाड़ी, किन्तु देखने में इतनी विशाल कि कुछ पूछना ही नहीं । घोड़ा और बढ़ जाय तो आसमान ही चूम ले दूर से देखने में आकर्षक, मनोहारी, हरी-भरी छोटी पहाड़ी बड़ी भयानक, बहुत खतरनाक है । इसके हरे-भरे आवरण के नीचे कितने ही मानव-पक्षी जन्तु निवास करते हैं क्या मजाल कि कोई दिन बिते वहाँ रह जाय ।

शिकार के शौकिन यहाँ शिकार खेलने भी जाते हैं । कुछ तो स्वयं शिकार होकर ऐसा हो जाते हैं कि उनका अस्तित्व भी ढूँढना ही नहीं मिलता है कुछ...

इस पहाड़ी को दो भागों में विभाजित करती निकली है एक नदी, जिसका उद्गम किसी को मालूम नहीं !

ढाल पर उतरते-उतरने काफी चौड़ी हो गई है यह चंचल सरिता ! इठलाती-बलखाती नदी लाखों का प्यास बुझाती रहती है हरदम ! इन्सान तो इन्सान आस-पास की धरती भी अपनी तृष्णा बुझाते-बुझाते अघा जाती है ।

इसी नदी की एक भुजा पर बसा है सेहदाँ ।

सेहदाँ !

एक छोटी सी रियासत । यहाँ से करीब दस मील का फासला तय करने के बाद शहर की आबादी चमक जाती है । शहर की सम्यता धीरे-धीरे इस गाँव में अपना प्रभुत्व, अपना स्वत्व जमा रही है । इसकी दाहिनी तरफ रामगढ़ रियासत है ।

चारों ओर हरे भरे घानों के खेत । मस्ती से सर उठाकर हवा की ताल पर थिरकते घान के छोटे-छोके लहलहाते, खुशनुमा पौधे ! दक्खिन की ओर घनी अमराई । आम की सघनता में कोयल की टोस भरी कूक, झुकी हुई डालियों पर पड़े झूले और उस पर दिन दुनिया की सुब-बिसारे झूलते गाँव के छोकरे । खेतों में रोपनी करती ग्रामीण युवतियाँ ! और उनके कोकिल कण्ठों से निकलते हुये ये सम्मोहक स्वर—

आइल पुरवइया के लहरा,

नाचे मन का मोरा रे !...

कैसी टीस, कैसा अनोखा दर्द अन्तर्हित हैं इन ग्रामीण कजलियों में कि कान सुने तो दिल निहाल हो जाय । हृदय आहत तो हो, किन्तु होठों से आह की जगह वाह ही निकले ।

ऐसा ही है यह सेदहाँ !

यहाँ की घरती सोने की, पानी अमृत जैसा और लहराते स्वच्छ वायु में है संजीवनी । अगर मुर्दा की नाक में घुस जाय तो बदन झट-कर उठ खड़ा हो ।

इसके अतिरिक्त एक ऐसी शक्ति है इस गाँव में जिससे सेदहाँ की शोहरत आस-पास के गाँवों में बहार की तरह छाई है । ऐसी शोहरत है यह कि कानों से सुनने पर थोथी कस्यना और आँखों से देखने पर स्वप्न का भ्रम हो जाता है ।

छोटी पहाड़ी के उस पार के जंगल में सँपेरो की दुनिया है, जहाँ के लोग असम्य हैं, किन्तु मनवता से अछूते नहीं । वे साँप काटे मनुष्य

छैला—२

को जिन्दा कर लेते हैं। हाथ के स्पर्श से नहीं, जादू-मंत्र की कठोर साधना की शक्ति से।

किन्तु छोटी पहाड़ी के इस पार, आधुनिक ढंग से बसे सेहदाँ के लोग साँप के डँसे इन्सान को हाथों के स्पर्श की चोट से ही जगा लेते हैं। ❀

विचित्र दैवी चमत्कार भरा है इस गाँव में। जिसे देखकर लोग चकित अवाक रह जाते हैं। दैवी शक्तियों पर विश्वास न होने पर भी जो यहाँ आ जाता है, मन में संघर्ष और अनोखा विश्वास लेकर चला जाता है।

सेहदाँ के इस चमत्कारी उपचार क पीछे एक अनोखा इतिहास है।

सेहदाँ की गोद में सँपेरा मुस्करा उठा है। रात की खुमारी लिये दूबों पर आँस की बूँदें आँगड़ाई ले रही हैं। नींद की चादर फेंक कर सारा गाँव जाग पड़ा है। अपने-अपने कामों में व्यस्त हो गये हैं सभी।

देखते ही देखते सूरज क्षितिज छोड़कर आकाश की ओर लपकने लगा है। वही पुराना हसीन-मंजर चारों तरफ लहरा उठा है, जैसे दिल की खुशी दोनों पर मधुर हाम बनकर थिरक उठती है।

और आज तो अजीब रौनक बिलरी है सेहदाँ में।

लाल-पीली 'झण्डियाँ', साज-सजावट। ठाकुर भुवसिंह की इवेना तो नवेली दुल्हन बन गई है सजघज कर।

तभी—

कच्ची सड़क पर पेड़ की छाया में घरोदों से खेलते नन्हें-मुझे बालक

❀ सेहदाँ शाहाबाद जिले के अन्तरगत एक गाँव है। यहाँ की यह कहानी मस्तिष्क की कल्पना नहीं। अब भी यहाँ साँप काटे व्यक्ति का उपचार इसी विधि से होता है। विश्वास न हो तो वहाँ जाकर देखें?

—लेखक !

छैला—२

चिल्ला कर एक ओर दौड़े । बड़े प्रसन्न हैं सभी । धूल भरी देह फूल की तरह आकर्षक लग रही है ।

“मोहन भैया !...वह देखो पालकी !...” छोटी-छोटी उँगलियों से एक ओर इशारा करता हुआ बोला रवि ।

“कहाँ रे !”

“उधर नहीं...उधर मोहन भैया !...तुम्हें दिखाई नहीं पड़ता... चलो न दुलहन देख आर्वे ।” मचल पड़े सभी बालक ।

“अरे, दुलहन नहीं है उसमें !...कोई साँप काटा आदमी होगा बेचारा !” बोला मोहन—“देखते नहीं खेलावन बाबा के चौरे का ओर जा रही है पालकी ।”

खेलावन बाबा का चौरा गाँव के किनारे खड़े वट-वृक्ष के नीचे है । वहीं पर साँप काटे इन्सान को जान मिलती है । पहले लोग आदमी को छूकर ही जिन्दा करते थे । किन्तु आजकल तो बगैर छूये ही मन्दिर में बन्दकर देते हैं, फिर ‘खेलावन बाबा की जय’ बोलकर ठीक कर लेते हैं । इसकी भी कहानी है—अजीब-सी ।

“चलो न भैया !...देखें कौन है !”

“भाग शैतान !...देखा नहीं है क्या !...कोई आदमी ही तो होगा...हमारी तरह ।” डाँटा मोहन ने तो सिरपिटा कर लड़के पुनः अपने घरौदों के पास चले गये ।

पालकी खेलावन बाबा के चौरे की ओर चली गई ।

मोहन लौट कर पेड़ की छाया में बैठी युवती के समीप बैठ गया । युवती गुमसुम होकर आँसू बहा रही थी । पता नहीं कौन-सी पीड़ा काट रही थी उसे ।

“देखो जी ! इतना-इतना मत रोओ...तुम्हारे आँसू मुझसे नहीं देखे जाते...कह तो दिया जो मर जाता है फिर वापस नहीं आता...

छैला—२

भला तुम्हारा छैला कैसे आ सकता है अब !” आठ साल का भोला मोहन बोला ।

“मैं अकेली जिन्दा रहकर क्या करूँगी !...मुझे नदी में डूब मरने दो भाई !...बोली वह युवती । उकका स्वर मार्मिक था । हवा तक सिहर उठी उसकी व्यथा सुनकर ।

“चुप रहो जी, यहाँ के लोग लोगों को जिन्दा करते हैं, मारते नहीं...मरना ही था तो कलेजे में घड़कन बाँधे नदी-किनारे क्यों आ लगी थी !” नन्हें मोहन ने सवाल किया !

“मुझे तो मालूम भी नहीं कि यहाँ कैसे आई !”

“मालूम क्यों नहीं ?...नदी में कूदी थी तो मरने के लिये ही... बाबा कहते हैं जब तक भगवान की मरजी नहीं होती, मरता नहीं है कोई...जान गई ना...विश्वास न हो तो बाबा से पूछ लेना...चलो अब ! बाबा इन्तजार करते होंगे...मौत आयेगी तो चली जाना ।”

दोनों उठकर एक ओर चल पड़े । मोहन के अंगों पर मैले-कुचैले देहाती ढंग के कपड़े थे और युवती की पोशाक तो अजीब थी । छाती पर साँप की चोली और कमर में चमड़े का लहँगा ।

उधर !

पालकी खेलावन बाबा के चौरे पर आकर रुकी । जीवन देने वाले ग्रामीण एकत्र हो गये ।

पालकी का परदा हटाया गया । उसमें से एक नौजवान का खूब-खुरत शरीर निकाला गया जो इस वक्त विकृत हो रहा था चेहरा कुछ काला और गोरा-गोरा शरीर हल्दी की तरह पीला हो गया था । मुँह से भाग बह रही थी ।

साँप डँसे नौजवान को खेलावन बाबा के मन्दिर में डाल दिया

छैला—२

गया । मन्दिर के भीतर कौन था, कुछ पता नहीं । बाहर से मन्दिर का दरवाजा बन्द कर दिया गया ।

गाँव के लोग एक स्वर में आकाश की ओर निहार कर चिल्ला उठे—
“खेलावन बाबा की जय !”

जयकार के उद्घोष से शून्य गगन गुंजरित हो उठा । दो चार बार यही क्रिया सम्पन्न हुई ।

और तब—

हवा का एक तीव्र झोंका आया ।

थोड़ी देर बाद ही—

मन्दिर के भीतर से किसी ने चिल्लाकर दरवाजा खटखटाया—
“खोलो...खोलो दरवाजा !”

लोगों के चेहरे पर प्रसन्नता खिल उठी । लपक कर एक ने किवाड़ खोला । दरवाजा खुलते ही चकित आँखों से सभी देखने लगे—

साँप के जहर से मृत नौजवान, जिन्दगी की साँस सँभाले सामने खड़ा था ! उसका शरीर पीला नहीं था अब । चेहरे की स्याही मिट चली थी ! मुँह से भाग का बहना बन्द हो गया था ।

यही तो था सेदहॉ का दैवी चमत्कार !

उसी समय कोई घुड़सवार आँधी की-सी तेजी से आया वहाँ । कूद पड़ा घोड़े से और दौड़ा नौजवान की ओर—पता नहीं क्यों !

सभी चकित थे ।

”X

X

X

महँगू का घोड़ा तीर की तरह सरपत भागा जा रहा था, सेदहॉ की ओर अब ये सेदहॉ के इलाके में प्रविष्ट हो चुके थे ।

खेत खलिहान रौदता महँगू का घोड़ा दौड़ रहा था, बेतहाशा । कोई भी बाधा उसे रोकने का साहस नहीं रखती थी ।

दौड़ते-दौड़ते घोड़ा । कच्ची सड़क पर आ गया जो रमजानपुर की ओर गई थी ।

सामने से दो व्यक्ति आपस में बातें करते जा रहे थे ।

एक था आठ साल का बच्चा और दूसरी थी युवती ।

दोनों बातें करने में इतने तल्लीन थे कि पीछे से आते घोड़े की सुघ भी नहीं थी ।

“यहाँ तो अजीब बात है लल्ला !...लोग कैसे ठीक कर लेते हैं डेंसे आदमी को...मंतर-वंतर भी तो नहीं पढ़ते !” युवती थी ।

“तुम क्या जानो !...बाबा कहते हैं, खेलावन बाबा भगवान हैं.... उनकी महिमा अपार है...” बालक था ।

“खेलावन बाबा थे कौन ?”

“बताया तो—भगवान थे...विश्वास न हो तो बाबा से पूछ देखो....”

युवती बालक की उँगली थामे उसके भोले चेहरे को देख रही थी । और बालक कौतूहल से उसे देख रहा था ।

दोनों बातें करने में भूले थे ।

उधर महँगू का घोड़ा आ रहा था पीछे से ।

महँगू अन्धा बनकर घोड़ा दौड़ा रहा था । उसे सिर्फ दिखाई पड़ रही थी सजल की मौत । अपने मालिक को जिन्दगी के लिये परेशान था वह । रास्ते में कौन मरता है कौन जीता है, उसे इसकी फिकर नहीं । यहाँ तक की अपनी सुघ भी नहीं थी उसे ।

घोड़ा बिलकुल करीब आ गया था दोनों के ।

“हरे मोहन का बच्चा !...जान भारी हो गई है क्या तेरी...भाग-भाग, पीछे घोड़ा दौड़ा आ रहा है....कैसा अन्धा सवार है...” खेत में काम करती किसी महिला ने चीख कर कहा ।

छैला—२

सुना मोहन ने तो सजग हो उठा ।

फिर कर देखा उसने—घोड़ा सर पर आ गया था । उसका दिमाग चकरा गया आकस्मिक विपत्ति देखकर । वह युवती से लिपट गया भय के मारे !

किधर भागे, किधर नहीं भागे, शीघ्रता में युवती भी नहीं समझ सकी ।

और घोड़ा आगे निकल गया ।

दोनों के मुख से चीख निकल गई ।

घोड़ा दोनों को धकेलता आगे बढ़ गया था । खेत की मजदूरिन दोनों के पास दौड़ आयी ।

महँगू के पीछे बैठा सँपेरा चीख की आवाज सुनकर सजग हो गया उसने पीछे मुड़कर देखा और उसके मुँह से निकला—

“महँगू, घोड़ा रोक दो...गजब हो गया ।”

“गजब हो गया है तभी तो घोड़ा दौड़ा रहा हूँ...चुपचाप बैठे रहो.. हवा रुक सकती है, घोड़ा नहीं रुक सकता...”

“तुम्हारे घोड़े ने किसी की जान ले ली....खून हो गया महँगू भाई ।”

खून !

चौक पड़ा महँगू ! उसने हत्या कर दी किसी की ।

खैर ! जो हो गया सो हो गया मगर रुक नहीं सकता वह ! और घोड़े की चाल कम नहीं हो सकी । घोड़ा रुका तो खेलावन 'बाबा के चौरे पर ही आकर । घोड़े पर से उतरा महँगू ।

“हे भगवान ! तेरी लीला अपार है मालिक !...तेरी दुनिया भले मौत दे...तू नहीं दे सकता...” महँगू के मुख से निकला ।

सँपेरा भी चकित रह गया ।

छैला—२

ठीक उसी समय पहुँचा था महुँगू, जब मन्दिर का दरवाजा खोला था लोगों ने और मौत की नौद त्याग कर सजल ने जीवन की आँखों से बाहर भाँका था ।

अपने मालिक को बरकरार देखकर महुँगू की खुशी आसमान चूमने लगी ।

उसी समय ।

कुछ क्रोधित ग्रामिणों की उत्तेजित भीड़ वहाँ आई । वे बोले—
“यही है वह छुड़सवार !...क्यों जी, घोड़े पर चढ़कर अश्वे हो गये थे क्या !...आसमान पर उड़ने लगे थे !...कभी तुम्हारे बाप ने भी सवारी की थी या तुम्हीं कर रहे हो !...इधर देखो तो जरा !”

जरा-सा ही तो देखा महुँगू ने उधर । किन्तु जरा-सा ही देखने के बाद उसकी जान सूख गई । खून पानी होने लगा उसका ।

मोहन के साथ वाली युवती थी वह । सर से खून बह रहा था उसके ।

“चमकी !” जब सँपेरे की निगाह उस पर पड़ी तो चीख पड़ा वह ।

आगे बढ़कर उसने युवती को बाहुओं में बाँध लिया—“उस्ताद कसम !...क्या मेरी आँखें सपना देख रही हैं....मेरे बाप ! क्या देख रहा हूँ मैं ।”

चमकी ही थी वह । बिलकुल चमकी हो । पता नहीं कैसे आ गई थी वहाँ । मगर सँपेरे को यकीन नहीं हो रहा था । चमकी को तो साँप ने डँस लिया था । चिकोरा ने उसे नदी में बहा दिया था ।

पुकार सुनकर युवती की आँखें चमक कर खुल गई ।

उसने सँपेरे को देखा तो देखती रह गई । कुछ देर पहचानने के मश्रात्-होठों से बोल फूटे—“छबीले !...छबीले मैया !”

छबीले ही था वह सँपेरा ! चिकोरा का शार्गिद !

चमकी और छबीले मिल गये ।

दोनों एक दूसरे के गले मिलकर सिसकने लगे । अपने छोटे से जीवन की लम्बी कहानी एक दूसरे की ओर देख-देखकर सुनाने लगे । दोनों की जवान चुप थी । होठ फड़क रहे थे कुछ बोलने के लिए, किन्तु खुशी का आवेग मौन रहने के लिये मजबूर कर रहा था । वाणी मूक थी, किन्तु दोनों की पलकें बोल रही थीं, सांकेतिक भाषा में ।

अजीब बात है, जिससे मिलने की उम्मीद इन्सान को नहीं रहती है, उसी से मिल जाता है वह ।

“छबीले !” चमकी के होठ फड़के ।

“चमकी !...मेरी बहन !...यह क्या देख रही हैं मेरी आँखें... कहाँ भयानक साँप के विष से मरी चमकी ! कहाँ जिन्दगी लेकर हँसती तुम !...मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है....उस्ताद कसम ! बताओ बल्दी...नहीं तो पागल हो जाऊँगा मैं !”

“तुम ठीक देख रहे हो छबीले मैया !...तुम्हारे सामने वही चमकी है...यह गाँव जिन्दगी देता है...नहीं जानते !”

“हाँ चमकी !...देखो न राजा साहब की !” कह कर सजल की ओर देखा छबीले ने ।

चमकी की भी नजर उधर गई ।

अरे !

चौक पड़ी वह ।

आज क्या-क्या देखने को मिल रहा है उसे । यह तो वही है, ठीक वही ।

ॐ चमकी और छबीले कौन थे ? छैला—१ देखिये ।

छैला—२

वही शहरी छैला ! अलबेला परदेसिया ! उसकी आँखों का तारा,
उसके दिल का सहारा, उसके सपनों की जिन्दगी, उसकी साँसों की गति ।

“छैला !...मेरे बाबू !...” कहकर चमकी सजल की ओर दौड़ी ।
दौड़कर उसने अपना सर उसके पाँव पर पटक दिया ।

सजल कुछ समझ नहीं सका ।

आस-पास खड़े ग्रामीण भी आश्चर्यचकित-से दोनों का मिलन देखते
रहे । महँगू भी काठ बनकर विस्फारित नयनों से देखता रहा ।

माझरा किसी की समझ में नहीं आया ।

दोनों मिलते रहे ।

चमकी विभोर थी और उसका छैला चकित ।

चमकी के हृदय में मिलन की आग जल रही थी । उसकी आँखों के
आंसू बह-बहकर चिर-वियोग के धारों पर मरहम लगा रहे थे ।

अमराई के झुमट से दर्दिली आवाज उठकर खुले आकाश की
छाती में वेदना-रस बोल रही थी—

नीचे उठत रे लपट अग्नि की, ऊपर बंदर की झड़ियाँ...!

रे बेदरदी सड़ियाँ !

सजल ठाकुर को जब देखा चमकी ने तो उसकी किस्मत चमक उठी। मगर लोगों ने जब बताया उसे कि वह, 'वह' नहीं है, जो वह समझ रही है तो उसके दिल के अरमान एक ही ठोकर से धूल-धूसरित हो गये। वह आकाश में उड़ती पतंग की तरह अभिलाषा लिये मेंडरा रही थी, किन्तु बीच ही में डोर टूट गयी और लडखड़ाकर जमीन पर आ रही, टूटे तारे-सी।

कितनी अभागिन है चमकी ! जब-जब उसने अपने छैला को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाये, तब-तब प्यार की अभिलाषिनी नारी के करों में खार ही चुभे।

कलेजे पर पत्थर रखकर उसने एकबार फिर निहारा सजल की ओर। और देखती रह गई, भीगी-भीगी आंखों में वेदना के आंसू भरे।

उसने पहचाना।

वह सचमुच वह नहीं था मगर था उसी का प्रतिरूप।

भगवान भी मजाक उड़ाने के लिये कभी-कभी कैसा निर्माण कर देता है।

“मुझे माफ करना बाबू !...मेरी आंखें अन्धी हैं और अन्धी आंखें अँधेरा ही पहचानती हैं हमेशा...मुझे घोला हुआ सरकार ! एक मुद्दत से घोला ही मिलता रहा है मुझे ।”

कहकर चमकी चुप हो गई । उसके चेहरे पर गंभीरता खेल रही थी । व्यथा की चोट से प्रताड़ित चमकी सर झुका कर जमीन देखने लगी, जैसे अपने छैला को खोज रहा हो धरती की धूल में ।

और सजल !

वह समझ नहीं पा रहा था, आखिर यह सब हो क्या रहा है ! आश्चर्यभरे नेत्रों से सब को बारी-बारी से देख रहा था । उसके चकित नयनों में प्रश्न-चिह्न डोल रहा था ।

अपने को नई जगह में पाकर तो ऐसे ही शान खो बैठा था ।

“महँगू, कौन है यह लड़की !” उसने पास खड़े महँगू से पूछा ।

“सरकार !...यह मेरी बहन है हज़ूर ! ..इसकी गुस्ताखी माफ करें...” सँपेरा बोल उठा—“आओ चमकी !...इधर आओ !”

चमकी सपने का सहारा छोड़कर छबोले के यथार्थ सम्बन्ध के समीप आ रही ।

छैला न मिला सही मगर छबोले तो मिला । इतना ही क्या कम है ! दूर देश में अपना दुश्मन भी मित्र बन जाता है । कम से कम छबोले उसको सहानुभूति तो देगा ही ।

निरावलम्ब चमकी को छबोले की उपस्थिति ने कुछ धैर्य दिया । डूबते को तिनके का सहारा मिला ।

उसी समय भीड़ चीर कर कोई व्यक्ति आया और बोला—“ठाकुर साहब ! आपको राजा साहब याद फरमा रहे हैं...”

सजग होकर देखा सजल ने, कोई लटैत था वह ।

राजा साहब से उसका मतलब सेदहों के स्वत्वाधिकारी ठाकुर

ध्रुव सिंह से था। राजा साहब को अब महुबारी के ठाकुर सजल के आने की खबर मिली तो उन्होंने सत्कार करना उचित समझा।

सजल दूसरे ही क्षण सुसजित हवेली के प्रांगण में था।

बहुत लोग आस-पास बैठे थे। अनूठी छटा बरसाती घटा की भांति उमड़-धुमड़ रही थी। लग रहा था जैसे कोई उत्सव हो।

उत्सव ही तो था। ठाकुर ध्रुवसिंह की वर्ष गाँठ थी। गाँव की रियाया तारों के समूह को तरह हवेली में छायी थी। शहर से भी मित्रादि पधारे थे, सहृदय ठाकुर साहब की लम्बी जिन्दगी की कामना लिये।

ठाकुर साहब का सरल-सौम्य व्यक्तित्व भी सामने विराजमान था। लोग उठ-उठकर ठाकुर साहब की अभ्यर्थना कर रहे थे। सजल भी उठकर भेंट करने उठा, किन्तु खाली हाथ दी—

“बड़े राजा !....आप के पैरों की धूल हूँ मैं तो...आपके गाँव में मुझे जिन्दगी मिली है...आप अमर हैं और आप का गाँव भी। और जो मर नहीं सकता, उसके जीने की कामना भी व्यर्थ है....सेवा की खातिर मेरी जान हाजिर है जिसे आपके गाँव ने सांस की ताकत दी है....”

कहकर सजल ठाकुर ध्रुवसिंह के पैरों पर झुक पड़ा। बीच ही में ठाकुर साहब ने पकड़ कर सजल को गले लगा लिया।

सजल घन्य हो उठा।

सूरज छुटक कर छोटी पहाड़ी के उस पार उतरने लगा। इस पार घुँघलका छा गया। सूरज की सुनहरी तिरछी किरणें अब भी पहाड़ी की चोटी पर थिरक रही थीं धीरे-धीरे आखिरी किरणों ने भी अपना बोरिया-बिस्तर बाँधा और चल पड़ीं।

हवेली में बड़े-नौस जल उठे। पेट्रोमेक्स के तीव्र प्रकाश से हवेली की एक-एक ईंट आलोकित हो उठी।

कुछ मेहमान तो शाम की ठंडी हवा खाने और ग्रामीण दर्यों को

छैला—२

देखने निकल पड़े, मगर सजल नहीं गया । वह ठाकुर साहब और कुछ मेहमानों के साथ बैठा रहा ।

सजल की बगल में एक नौजवान बैठा था, सुन्दर-सा । उसके चेहरे की गम्भीरता महानता की द्योतक थी । किसी बड़े खानदान का लग रहा था वह ।

“आपका परिचय जानने की धृष्टता कर सकता हूँ ?” सजल ने आखिर पूछ ही डाला ।

“अवश्य !” मौन युवक के होठ हिले गंभीरता चपलता में बदल गई !

“इसे नहीं जानते बेटा !...ये हैं रामगढ़ रियासत के छोटे कुँवर चंचल, अचलजी के अनुज !...अचलजी अस्वस्थ हैं बेचारे ! अजगर के पेट में चले गये थे और फिर वापस आ गये...इनके पिता से खूब पटती थी मेरी !” ठाकुर साहब बोल उठे !

“कुछ ऐसी ही बात सँपेरा भी कह रहा था...” सजल ने कहा ।

“सँपेरा कौन...कैसी बात ?” चंचल उत्सुक हो उठा ।

“यही कि उसके गाँव का कोई टिकोरा अजगर ले आया था... उसके पेट से एक परदेसी निकला, आदि-आदि...खैर ! जाने दीजिये मुझे उसकी बातों पर पहले विश्वास नहीं हुआ, किन्तु आपके भाई ही परदेसी हैं जानकर आश्चर्य हो रहा है ।”

सजल के मुँह से सँपेरे की बात सुनकर चौंका चंचल । कौन है यह सँपेरा ! कौन हो सकता है ! उसके मस्तिष्क में द्वन्द उठ पड़ा !

“कहाँ है वह सँपेरा !...मैं मिलना चाहता हूँ ।”

“वह तो मेरे गाँव चला गया !...कहाँ सजल ने और उसने चमकी के बारे में भी बताया ।

चमकी के बारे में सुना चंचल ने तो सोचने लगा—कहीं मैना ही तो नहीं है यह लड़की तभी तो परदेसी छैला कहकर सजल के पैरों से

लिपट गई थी। तो क्या टिकोरा ने मैना को बिन्दा कर लिया सेदहों लाकर मगर कैसे आया वह यहाँ ?

अजीब-अजीब प्रश्न उठने लगा चंचल के मन में।

“उस लड़की का नाम क्या है ?”

“ओह !...भूल गया मैं...मन में है किन्तु जवान पर नहीं आ रहा है...सँपेरा कह रहा था—मेरी बहन है यह...शायद वह भी उसके साथ ही गाँव गई।”

“मैं उससे मिलूँगा कब चल रहे हैं आप” चंचल व्यग्र हो उठा।

“कल सुबह !”

“ठीक है...मैं भी चँलूँगा आपको कोई एतराब तो...”

“क्या कहते हैं आप...आपका ही घर है।”

ठाकुर ध्रुवसिंह दूसरी ओर मुँह फेरकर दूसरे मेहमानों से बातें करने में तन्मय थे।

उसी समय—कोई लठैत आया और उसने ठाकुर साहब के हाथ में एक चिट्ठी थमा दी। लिफाफे पर लिखा था—

“चंचल !”

“क्या है बाबू जी !”

“तुम्हारा पत्र !” लिफाफा चंचल के पास आ गया। बड़ी व्यग्रता के साथ उसने खोला लिफाफे को।

उसकी आँखें सफेद कागज पर उगे काले अक्षरों को पढ़ने लगी—
चंचल

तुम्हारे भैया की हालत नाजुक है। किन्तु घबड़ाने की बात नहीं। शीघ्र आ सको तो उत्तम...

तुम्हारी—
माभी !

छोटे से पत्र में कितनी विकलता भरी थी यह तो चंचल का हृदय ही जान रहा था । पत्र के एक-एक अक्षर में उसे भाभी की रोती आँखें दिखाई पड़ीं ।

“पिता जी !” चंचल ने ठाकुर साहब को सम्बोधित कर कहा—“मैं जाऊँगा अभी...मैया की तबियत ठीक नहीं है...” चंचल के स्वर में गंभीरता थी, मगर अन्तर में थी हलचल ।

“क्या है !”

“लीजिये !” पत्र ठाकुर साहब के हाथों में गया । उन्होंने भी पढ़ा ।

चंचल रात को जाने के लिये तैयार हो गया । रास्ते की भयानकता उसके लिए अवरोध नहीं बन सकी अपने जीवन की महत्ता उसके लिए कुछ नहीं । उसे अपने भाई की जिन्दगी अधिक मूल्यवान् प्रतीत हो रही थी इस समय । उसी की वजह से तो अचल के जीवन में मौत का सृजन हुआ । ऐसी मौत आई है कुँवर अचल नारायण के पास कि वह मर भी नहीं सकता और ठीक से जी भी नहीं सकता । अजीब झमेले में पड़ गया है बेचाग...मैना का बदनसीब परदेसी !

चंचल ने शंकर को मोटर ठीक करने की आज्ञा दी । मोटर ठीक ही थी ।

रात के आँधरे में चंचल भारी मन लिए, रामगढ़ की ओर चल पड़ा मोटर भाग रही थी पर उससे भी तेज गति थी चंचल के विचारों की ।

पुरानी कहानी दुहरा कर चंचल अपने को हेय, नाच और पतित आदि की संज्ञा देता चल रहा था । रह-रह कर ग्लानि से भर उठता था उसका हृदय ।

पहाड़ी और खतरनाक रास्ते से गुजर रही थी मोटर । अभ्यस्त शंकर सावधानी बरत रहा था । पग-पग पर खतरा मुँह बाये खड़ा था ।

छैल—२

एक ओर पहाड़ की ऊँची दीवार थी तो दूसरी ओर हजारों फीट गहरी खाई जो रात का अँधेरा पीकर साँय-साँय कर रही थी। जरा भी चूकने पर मौत !

लेकिन चंचल के आगे मौत का नहीं, कुँवर की जिन्दगी का सवाल था।

और उधर सजल, ठाकुर ध्रुवसिंह से बातें करने में विभोर था। वह जीवन देने वाले गाँव के विषय में जानकारी हासिल करना चाहता था।

जब सजल ने वहाँ के इस दैवी चमत्कार की विचित्र विधि के इतिहास के बारे में पूछा तो ठाकुर साहब बोले—“इसके पीछे एक अनोखी कहानी है बेटा !...बड़ी दर्दिली....आंसू से लबरेज....उस वक्त मेरा जन्म भी नहीं हुआ था...इस गाँव के एक किनारे—”

×

×

×

पूर्व की ओर एक पुराने ढंग का खपरैल। ईंट-पत्थरों के जोड़ पर खड़ी, खून-पसीने के त्याग एवं अभाव के दुलार से निर्मित—मकान के भीतर एक परिवार, रो-गा कर जीवन-यापन करता था।

पेट के लिए मेहनत करने वाले चार भाई।

तीन की शादी हो चुकी थी। फूज जैसे बच्चे और सुशील पत्नियाँ ! सबसे छोटे की शादी अभी नहीं हुई थी।

छोटे भाई का नाम था खेलावन !

बीस-बाईस का हीरा जवान ! गठीला बदन। कसरत की कसौटी पर कसे ञंग ! होठों पर भिनती मूँछें, जवानी की परिचायक। आँखों में लाल-लाल डोरे खिल चुके थे। आखें दिन में नई चमक देखतों और रात की नींद में मादक सपने।

साल भर बाद !

खेलावन की शादी हो गई। शहनाई बजी। खेलावन रात-दिन

अपने मन में एक मीठा हलचल लिये सुहाग रात का इन्तजार करने लगा । उसकी साध भी पूरी हुई किन्तु अरमान अधूरे ही रह गये । जीवन का यह नया मोड़ उसे उमंगों से भरा मालूम दिया ।

किसी काम में उसका जी नहीं लगता । सिर्फ पत्नी से बातें करने में, उसके सम्पर्क की मादकता लूटने में उसे असीम आनन्द की अनुभूति होती ।

रोज अपने भाइयों के साथ खेत पर जाता । पर उसका मन पंख लगाकर कहीं और उड़ता रहता, हाथ कहीं और चलते । कोयल की कूक, पपीहे की पुकार, बांसुरी का स्वर, चिड़ियों की चहक, पेड़ की ठंडी छांव, अन्न के दाने, पानी के कतरे और चंचल नदी की शोख लहरों में एक अजीब आकर्षण, विचित्र परिवर्तन दीवने लगा था उसे ।

वह आसमान में मनमाना घूमते काले-सफेद मेघों को देखता और उसमें 'किसी' की आकृति खोजता रहता । दिन किसी तरह तड़पन की च्वाला में जलते बीत जाता । शाम आती और घर पहुँच जाता, तब कहीं उसके बेताब दिल को करार मिलता । उसकी कुछ बोलती-चालती निगाहों को राहत मिलती ।

घर जाने पर उसकी आंखों को झलक तो मिल जाती, लेकिन घर के बड़े के सामने जबान कुछ कह नहीं पाती । संकोच की अर्गला होठों पर लग जाती । और रात को जब कुछ देर का साथ होता तो रात भी बात की बात में नौ दो ग्यारह हो जाती । उसकी तमन्ना सिसकती ही रह जाती, आगामी रात की प्रतीक्षा में ।

खेलावन को क्या पता कि जवानी के दिन लम्बे, रातें छोटी अर हसीन होती हैं कि पलक मारते सब कुछ बीत जाता है ।

उधर खेलावन के खेत में मकई और बाजरे के पौधे जवान होने लगे और इधर उसके मन की साध भी पनपने लगी ।

छैला—२

पौधे आसमान में सर उठा कर झूमने लगे। खेलावन के मन की कामना भी इतनी बढ़ गई कि वह अपने पर अंकुश नहीं लगा सका।

वह रोज रात खेत की मचान पर जाकर सोता लेकिन सो कम ही पाता, जाग कर तारे अधिक गिना करता। रात में जब सियार 'हुआं-हुआं' का मन्त्रोच्चार करने लगते तो वह तन्मय होकर सुनने लगता। उसे लगता जैसे इस 'हुआं-हुआं' में भी अव्यक्त कवणा निहित है। उसकी बेचैनी बढ़ने लगती, बढ़ती जाती और एक ब एक सबेरा हो जाता।

उसके भाई उसकी मजबूरी पर ध्यान नहीं देते। पता नहीं वे कभी जवान हुए थे या नहीं। उसके मन में हिलोरें उठती थीं या नहीं। अगर उठती थीं तो घायल की गति घायल क्यों नहीं जानता ?

उसे अपने भाई पर क्रोध आता, किन्तु विवश होकर रह जाता।

खून का घूँट पीकर अन्तर में एक शोला भड़का लेता सिर्फ।

मगर आज वह विद्रोह करेगा। उसने मन में ठाना ! बरसाती नदी बांध तोड़कर बह निकलेगी। अपनी लहरों की चोट से किनारे को अचल नहीं रहने देगी।

रात को खेत न जाने पर तुल गया वह।

शाम हुई और फिर रात।

“खेलावन !” बड़े भाई की आवाज थी।

“भैया !” गंभीर स्वर में वेदना का सम्मिश्रण था।

“चलो खेत पर !”

“भैया !...” आगे कुछ नहीं कह सका। उसके मन की साध मन में ही रह गई। साहस नहीं कर सका खेलावन कि कुछ कहे। कुछ कह कर उद्‌ड बनना नहीं चाहता था।

मन मारे असहाय, पीछे-पीछे चल पड़ा। एक ओर भाई के आदर

खैला—२

का प्रश्न था, एक ओर दिल की आवाज थी ! द्वन्द्व मच रहा था उसके मन में ।

“भैया !...मेरे सिरमें दर्द हो रहा है ।” हिम्मत कर कहा उसने ।

“चल-चल !...भरी जवानी माँझा ढील...बहाना बनाता है । हम भी जवान थे मगर सर में दर्द तो कभी नहीं हुआ...यह दिल का दर्द है...यह सब ठीक नहीं । अभी बच्चे हो तुम !” बड़े भाई ने नसीहत दी ।

निरीह खेलावन का अनुरोध भी अस्वीकृत हो गया । मूक पीछे-पीछे चलता रहा वह । कैसे बताये वह कि...

कुछ ही दूर चलने पर चीख पड़ा खेलावन ! पैर पकड़ कर बैठ गया वहीं जमीन पर ।

“भैया !...किसी कीड़े ने काट लिया मुझे !...”खेलावन बोला ।

“चल-चल, समझता हूँ तेरी चालबाजी !...कहाँ सोना चाहता है ! ...मैंने कहा न, बुरी बात है यह सब !” बड़े भाई ने डाँटा गंभीरता पूर्वक ।

फिर कुछ बोला नहीं खेलावन । विवश होकर मन में पीर की कसक और तीर की चुभन लिये चुपचाप मचान पर जाकर सो रहा । उसका बड़ा भाई खेत की दूसरे ओर की मचान पर खर्राटे भरने लगा ।

तभी किसी कोने से देहाती तराने की स्वर-लहरी वातावरण में एक अजीब मदहोशी घोल गई—

घेरि-घेरि आवे घटा घोर मन मोर नाचे ।

रसे रसे बहेला बयार !

बिहुआ तऽ मारे रामा अँगुरी के पोरवा से ।

रगे-रगे टीसेला हमार ।

हवा सिहर उठी । सियारों के स्वर ने ताल दिया उसमें । खेलावन ने सुना सुनता रहा—न जाने कब तक ।

उसके सीने में ज्वालामुखी धधक रहा था । उसे प्यास लगी किन्तु

छैला—२

पानीपिने की तमन्ना भी नहीं रही उसकी। उसका गला सूखने लगा, फिर भी निश्चल पड़ा रहा मच्चान पर। प्यास की ज्वाला तीव्र हो उठी तो होंठ चाट कर रह गया।

ओस चाट-चाट कर रात की रानी जवान हो रही थी। ठंडी-ठंडी हवा के हलके झोंके खेलावन को लू जैसे लग रहे थे।

दिन को जगा कर रात सो गई। अभी कुछ-कुछ ही उजाला हुआ था।

नीचे से खेलावन को किसी ने पुकारा।

खेलावन ने उत्तर नहीं दिया। वह सोया था दिल में आग लेकर। किसी के प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहता था वह। समस्या तो उसकी जटिल थी। जो अपना हल नहीं पा सकता, दूसरे का समाधान कैसे कर सकता है।

“अरे ओ खेलावन !...रात भर सोया, नींद नहीं पूरी हुई क्या !...खेलावन !” शायद खेलावन के बड़े भाई ही थे।

जवानी की नींद तो हिमालय की तरह होती है, भला क्यों डिगने लगी। जगा नहीं खेलावन तो उसका भाई झुंझला कर मच्चान पर चढ़ा।

हाथ से हिलाया-डुलाया। फिर भी नहीं जगा खेलावन।

खेलावन !” कहते-कहते जब बड़े भाई ने उसके चेहरे की ओर देखा तो चौंक पड़े।

देखा—

खेलावन के मुँह से सफेद-सफेद साबुन की फेन की तरह कोई चीज निकल कर बह चली थी। चेहरा विकृत, शरीर स्याह और आँखें पथरायी थीं। बड़े भाई का दिल घड़का।

मच्चान से उतारने पर पता लगा कि सॉप ने डेंस लिया उसे। रात

की घटना खयाल आयी बड़े भाई को । सर पर हाथ रख कर रह गया वह । रो उठा सारा परिवार । नवेली दुलहन के माँग का सुहाग आकस्मिक आपत्ति ने पोंछ दिया, गोरी-गोरी कलाइयों में खनक पैदा करने वाली चूड़ियाँ टूटकर बिखर पड़ी ।

उफ् ! कितनी बड़ी भूल को थी बड़े भाई ने । लेकिन अब क्या था । खाली पोंजरा हो तो था । कहने-सुनने के लिये कहानी ही तो रह गई थी ।

भोली नारों के पैरों का महावर अभी तक चमक रहा था । किन्तु माँग का सिन्दूर जमाने की गर्दिश में उड़ चुका था !

आह !—उसके सपने अधूरे रह गये । अरमान हाथ-हाथ कर उठे । वह रोयी, रोती रही आँखों में गंगा-जमुना, दिल में तमन्नाओं की चधकती चिता और मन में करुण हाहाकार सम्भाले । वह तड़पी मगर फरियाद न बनी ।

दिन बीत चले !

घर वाले भूल गये खेलावन को किन्तु भोली नारी पति की याद में घुलती रही । घुलते-घुलते बिलकुल ही घुल गई ।

एक दिन बीमार पड़ गई वह । दो-चार रोज़ बुखार आया । पति के वियोग में जलने वाली नारी एक दिन पारिवारिक बन्धन से मुक्त हो गई । लोग तो उसको दोषी ही ठहरा रहे थे—“चार दिन आये हुआ और पति को हो खा गई चुड़ैल !”

सहनशीलता की एक सीमा होती है और यहाँ तो भाग्य द्वारा प्रताडित नारी की व्यथा एवं सहिष्णुता पराकाष्ठा तक पहुँच गई थी ।

जिसकी ओर दुनिया उँगली उठाती है, उसे जीने का अधिकार ही क्या ! जी तो वही सकता है, जिसके पास संघर्ष करने की शक्ति हो । जो उँगली उठाने वालों के मुँह पर थपड़ जमा सकता हो । किन्तु

छैला—२

एक नारी भला कैसे इतना साहस कर सकती है उसे सहारा चाहिये पुरुष का। पुरुष का सहारा पाकर वह एक बार मौत से भी लड़ने की शक्ति रखती है।

लेकिन यहाँ तो विधवा हो गई थी वह। सहारा टूट चुका था। जीने का भी सहारा नहीं उसके पास तो संघर्ष कैसे करती !

उसने भी बेरहम परिवार से नातै-रिश्तै तोड़ ही लिये।

घरती का आघार पाकर जो मिल नहीं सके, वही निराधार आसमान में एक हो गये।
महीने भर बाद !

एक रात गाँव के किसी व्यक्ति को स्वप्न हुआ। उसने सपने में खेलावन को देखा, उससे बातें कीं।

खेलावन ने कहा—“मैं साँप के जहर से मर गया, लेकिन आज से दुनिया का कोई भी विषैला साँप किसी को भी क्षति नहीं पहुँचा सकता...साँप ने मुझे डँसा, अब मैं साँप का दुश्मन बन गया हूँ... जाओ तुम ठाकुर साहब के गोशाला में गाय को करैत ने डँस लिया है...मैं जैसे बताता हूँ करना...अभी जाओ...”

और तब वह उठा जाने के लिये तो उसकी नींद खुल गई। अपनी मूर्खता पर उसे हँसी आई। रात के आँचरे में खेलावन की बात उसके कानों में गूँजती रही।

आँखें बन्द कर फिर सो गया वह।

अभी भूपकी आई ही थी कि हवा का तीव्र भोका आया उठेंगे दरवाजे खुल गये। किसी छाया ने प्रवेश किया। छाया सोये व्यक्ति के सिरहाने आकर खड़ी हो गई। उसके हाथ उठे और—

और एक चपत !

चीखकर जाग उठा वह अपना गाल सहलाता हुआ। लालटेन

छैला—२

जलायी उसने । इधर-उधर देखा लेकिन कोई हो तब तो दोख पड़े ।
सोचा सपने में सब कुछ हुआ है । फिर सो गया ।

फिर वही घटना । वह जाग पड़ा । उसे लगा जैसे कोई जबरदस्ती
गोशाले की ओर खींचे जा रहा हो ।

खेलावन की आवाज अब तक उसके कानों में गूँज रही थी ।

अव्यक्त शक्ति की प्रेरणा के वशोभूत होकर पहुँचा गोशाला में ।
उसने जो कुछ देखा, चकित रह गया ।

चार-पाँच ग्वाले खड़े थे । गाय जमीन पर हुँकाही मर-भर कर
तड़प रही थी ।

सपना उसे सत्य के रूप में मिला ।

सपने में बतायी विधि द्वारा गाय का उपचार करने लगा वह ।
उसकी विचित्र अवस्था हो रही थी । लगता था जैसे उसके मन में बैठा
कोई आदेश दे रहा हो वैसा करने के लिए ।

अर्द्ध विच्छिन्न-सा हो उठा था वह । गाय के निकट पहुँचा और चिल्लाया
तैजी से—“खेलावन बाबा की जय !” उसके हाथ ऊपर उठे और....

तड़का !

गाय के जिस अंग में साँप ने डँसा था उसी जगह पर उसका हाथ
दो तीन बार गिरा ।

वह धीरे-धीरे बेहोश होने लगा, छुटपटाने लगा ठीक गाय की तरह
लेकिन गाय ठीक होने लगी । गाय का जहर उसपर चढ़ने लगा था ।

लोग विस्मय-विभोर होकर देख रहे थे सब कुछ ।

“पानी !..” उस के मुख से निकला ।

पानी आया । पीने लगा वह और पी गया पूरी बाल्टी । तब कहीं
उसकी छुटपटाहट शान्त हुई । धीरे-धीरे स्वस्थ हो गया वह ।

+

+

+

छैला—२

“उसी दिन से यह गाँव जीवन देने लगा...गाँव का प्रत्येक व्यक्ति खेलावन बाबा को बुलाकर सोंप का विष उतारने में सफल होने लगा !” करुण स्वर में बोले ठाकुर ध्रुवसिंह—“मगर अफसोस ! खेलावन बाबा के खानदान में से अगर कोई पुकारता है तो वे नहीं आते...उन्हें अपने परिवार से नफरत है अब तो घर ही बरबाद हो गया है । जिस घर का दिया ही बुझ गया, वहाँ अँधेरा न होता तो और क्या होता...इसके आगे भी कहानी है बेटा !...तुन्हें नींद तो नहीं आ रही है !”

“नहीं !...यहाँ के लोग मौत की नींद तोड़ सकते हैं...यह तो रात की नींद है...आप आगे कहिये !” सजल तकिये को कुहनी के नीचे दबा कर सुनने के लिये उत्सुक हो उठा ।

“जहाँ पर आजकल खेलावन बाबा का मन्दिर बना है; वहीं स्वप्न देखने वाले व्यक्ति का घर था । समय के साथ-साथ उसका निशान मिट गया और उसकी जगह बरगद का पेड़ निकल आया । लोग उसे “चौबाह” कहने लगे । यह नाम कैसे पड़ा—पता नहीं...बरगद की जड़ों पर अनंत चतुर्दशी के रोज एक व्यक्ति बैठा था । किसी राही ने उससे आकर पूछा—

×

×

+

“यह कौन गाँव है भाई !”

“सेदहॉ !”

सुनकर परदेसी बैठ गया, बरगद की छाँव में सुस्ताने के लिए ।

“क्या नाम है तुम्हारा !” परदेसी ने पूछा ।

“खेलावन !” खेतों की ओर देखता हुआ बोला वह व्यक्ति ।

कुछ देर तक दोनों में बातें होती रहीं, फिर उठकर चल पड़े गाँव की ओर । पगडंडी पर चलते-चलते परदेसी ने फिर पूछा—“क्या नाम बताया था भाई तुमने !”

छैला—२

“भिखारी !” बोला नहीं ।

“अजी, वहाँ तो कुछ और बताया था तुमने !”

“तुम्हें याद नहीं होगा...”

राही उसे पागल समझ बैठा ।

×

×

×

“उसी दिन से लोगों को यह पता लगा कि जो अनन्त चतुर्दशी के रोज बरगद की जड़ पर बैठता है, उसमें खेलावन बाबा को आत्मा प्रवेश कर जाती है...उसे लोग खेलावन बाबा ही सम्बोधित करके कोई प्रश्न करते हैं...सभी प्रश्नों का उचित उत्तर देते हैं वे । आज भी यह घटना पूर्ववत् होती है...शंका की तनिक भी गुंजाइश नहीं इसमें...”

“अगर किसी आदमी को जो, विदेश में हो, सॉपकाट ले तो खेलावन बाबा बुलाने पर वहाँ पहुँच जायेंगे ?” सजल ने शंका रखी ।

“अवश्य !...वे कहते हैं, मेरी गति मन की तरह है...लेकिन पुकारने वाला सेदहाँ का ही होना चाहिये...” ठाकुर साहब ने कहा ।

“इस तरीके द्वारा तो काफी धन एकत्र किया जा सकता है ।”

“नहीं...खेलावन बाबा का आदेश है, जिस दिन इस भलाई की खातिर एक पैसा भी किसी ने लिया, उसी दिन से गाँव छोड़कर चले जायेंगे वे...इसी भय की वजह से तो उन्होंने मन्दिर बनवाने की आज्ञा दी । अब तो मन्दिर के भीतर आदमी बन्द करने पर ही स्वस्थ हो जाता है...अन्दर शेषनाग की प्रतिमा रखी है ।”

“यह तो मुझे मालूम है...जब मैं होश में आया तो मुझे लगा कि मेरे साथ कोठरी में कोई और है...शायद उन्हीं की पवित्र आत्मा होगी सजल ने कहा ।

“हो सकता है !” ठाकुर साहब ने कहा—“ यही इतिहास है इस

छैला—२

दैवी चमत्कार का...कल्पना से भी अधिक आश्चर्यमय है यह पर है सत्य....अब सो जाओ, रात काफी बीत गई ।”

लेकिन सजल को नींद नहीं आयी उस रात ! कभी खेलावन बाबा की बात तो कभी चमकी के बारे में और कभी घर पर रचना के लिये व्यग्र हो उठता । थोड़ी देर के लिये आँखें झपकी भी तो पलकों की छाया में विचित्र-विचित्र सपने जाग पड़े ।

दूसरे दिन सजल महुवारी के लिये रवाना हुआ । सेदहों की ओर उसकी हसरत भरी निगाहें उठीं, उसका दिल कसक गया ! लेकिन महुवारी तो जाना ही था उसे सो चल पड़ा ।

रानी साहिबा ठीक हो गई हैं। चंचल भी सेदहॉ चला गया है।
किन्तु अचल !

अचल बीमार है। उसकी हालत दिनोदिन अबतर होती जा रही है। आजकल कुँवर बुखार एवं मानसिक व्यथा से पीड़ित है।

मैना की याद, माँ की बीमारी के पीछे रात-रात भर का जागरण और भूख-प्यास के उपवास ने उसे मरीज बना दिया है !

पूनी का चांद अमा के बादलों से धीरे-धीरे ढँकता जा रहा है।

अचल के चेहरे पर अजीब किस्म का रंग चढ़ रहा है आजकल। हमेशा सर में पीड़ा और दिल में बेचैनी छाई रहती है। उदास-उदास आँखें किसी को खोजती रहती हैं। उसकी पुतलियां कुछ बोलतीं, किन्तु पुतलियों की भाषा कौन समझे ? किसी से अधिक बोलना नहीं सुहाता है उसे, इसलिये बेमन पड़ा रहता है। कभी हँसता भी नहीं मानो दुनिया की सारी खुशी, सारी रंगीनी उसकी दृष्टि में गुनाह है।

छैला—२

कविता हमेशा कुँवर के पास बनो रहती है। उससे भी प्रेम की दो बातें नहीं करता है वह। हरदम विक्षिप्त होकर कुछ सोचता रहता है। आँखें खुलती हैं, मगर कविता को नहीं देखती। देखती है तो सिर्फ छत। कुँवरानी पति का यह व्यवहार देखकर विचलित हो उठती है। पर अपने हृदय की व्यथा को होठों से बाहर नहीं निकलने देती।

मूक साधना में रत कुँवर के अघर कभी हिलते हैं, जबान किसी को पुकारती भी है, किन्तु बाणो जो निकलती है उसमें कुँवरानी कविता का नाम नहीं रहता। रहता है तो सिर्फ मैना का।

अचल का बदन आग है, दिल में याद की चिता धधक रही है, आँखें लपटें उगल रही हैं ! वह शान्ति चाहता है, किन्तु उसकी जलन कोई बुझा नहीं पाता। इससे उसकी मानसिक व्यथा और भी दयनीय होती जा रही है।

मानसिक अवस्था ठीक नहीं होने के कारण वह कभी-कभी भुँभुला पड़ता है, क्रोधित हो उठता है। यहाँ तक कि वफादार वारिस भी उसके क्रोध का शिकार हो जाता है, क्योंकि वह हमेशा उसकी खिदमत में हाजिर रहता है। कुँवर एकान्त का अभिलाषी है, पर लोग उसे तन्हाई में छोड़ते नहीं।

उसके अन्तर को कहीं राहत मिलती है, तो सिर्फ मैना के स्मारक के पास। वह स्मारक के पास बैठता है, बैठा रहता है। खुली-खुली आँखों में वेदना के कुछ आँसू लिये निहारता रहता है।

अजीब जिन्दगी हो गई है अचल की। लोग उसकी बीमारी के बारे में कुछ नहीं समझ पाते हैं। अपार दौलत के अधिपति को भी दुख हो सकता है, कोई समझ नहीं पाता। सुख के सभी साधन तो प्रस्तुत हैं फिर क्यों कुँवर को सुख नहीं मिलता ! कौन-सी चीज उसके दिल में

छैला—२

काँटा बनकर दर्द पैदा कर रही है ! दुनिया का कौन जरा उसकी आँखों की किरकिरी बन गया है !

यह तो सिर्फ कविता जानती है और जानते हैं डाक्टर दास । और कुछ-कुछ वारिस भी । यही लोग तो हमेशा अचल की गति विधि पर गौर करते रहते हैं । रानी माँ भी जानती हैं, किन्तु कहती नहीं कुछ ।

सभी जानते हुए भी खामोश हैं । कोई अचल की बिमारी की दवा नहीं ला सकता । कविता भी पड़ी-पड़ी अपने पति की पीड़ा देखती रहती है । जीवन में पति के दुख-सुख की भागिनी नारी अपने पति के दुख में भी हाथ नहीं बटा पाती है ।

आज की नारी कितनी विवश है, पुरुष के सहारे के बगैर एक पग भी नहीं बढ़ा पाती । और आज का पुरुष है कि निरीह नारी को सम्बल तो क्या, धीरज भी नहीं देता ।

अपनी शक्ति की सीमा सीमित देखकर कुँवरानी कविता का नारी हृदय कभी-कभी विद्रोह कर उठता है । काश ! वह पति के मर्ज की दवा ला सकती । जरा भी शान्ति अपने पति को दे पाती तो घन्य हो उठती वह । अगर मैना उसको मिल जाती तो साधिकार अपना स्थान उसे दे देती, जैसे एक बार दिया था । किन्तु वह त्यागमयी प्रतिमा तो संसार त्याग चुकी थी । उफ् ! इसी सोच में जल-जलकर राख हो रही है बेचारी ।

सुख-दुख का जीवन कितना छोटा होता है । सुबह और शाम की जिन्दगी से भी कम । आकाश की छाती पर खिले फूल कब जमीन की गोद में चू पड़ेंगे, इसे कोई नहीं जानता ।

आने वाले कल का क्या होगा, वर्तमान के हाथों का खिलौना इन्सान नहीं जान पाता है । वह नहीं जान पाता है कि उसका भविष्य एक ऐसे तूफान का निर्माण कर रहा है, जो उसे भी तबाह कर देगा ।

छैला—२

अबीब है जिन्दगी और विचित्र है किस्मत की लकीर ।

रात-दिन की दूरी नापने का पैमाना है, किन्तु किस्मत की रेखा नापने का तो नहीं ।

कोई नहीं जानता कि कुँवर का डगमगाता उदित जीवन कब लड़-खड़ा कर अस्त हो जायगा ।

अचल की बीमारी बढ़ती जा रही है । कविता परेशान है । कुँवरानी का भाग्य उसे बरबादी का पैगाम सुना रहा है । सीने में दर्द दबाये सहनशील नारी आँखें खोले बैठी है—गुमसुम, तकदीर का खेल देखने की खातिर ।

रात हो गई है । बाहर ठँडी हवा सनसना रही है । आकाश रोज की तरह तारों का आकर्षण लादे खिला है । कुँवरानी कुँवर को दवा पिलाकर चुपचाप बैठी है । वारिस आदि कोई नहीं है । कमरे की खिड़की खुली है । बाहर से सुरभित वायु का झकोरा आ रहा है । कुँवर निश्चल पड़ा है पलंग पर । उसकी पलकें बन्द हैं, लेकिन मौन नहीं । वे बोल रही हैं कुछ ।

कुँवर को बेखबर नींद में लीन देख रही है कविता । देख रही है कि कुछ ही दिनों में कैसा हो गया है कुँवर ! गुलाब जैसे चेहरे पर हल्की जैसा पीलापन छितरा गया है, चाँद के मानिन्द बदन अँधेरी रात बन गया है । कविता की वेदना बढ़ने लगी है । उसकी आँखें रोने को आतुर हो उठी हैं । उसके अघर फड़के, मगर बोल नहीं फूटे । दिल की हाय आँखों से पानी बनकर बह पड़ी । कितनी विवश हो गई है कुँवरानी ।

नारी की छाती पर कितना घातक प्रहार है यह कि पति तो पास हो, मगर प्रेम की दो बातें करने के लिये उसका दिल तरस कर रह जाय ।

जब कभी कविता कुछ पूछती है तो अचल जवाब नहीं देता । अधिक झूठ करने पर या तो भूँभूला उठता है या 'हाँ-ना' में उत्तर दे देता है ।

फिर कुछ बोलती नहीं है कुँवरानी ! जानती है कि उसके जीवन के वृद्ध में सुख के फल नहीं लगे हैं अभी ।

कभी-कभी अन्तर की पीड़ा कसक जाती है तो पति की खामोशी से प्रताड़ित नारी, महल के किसी भी सुनसान कोने में जाकर दो-चार आँसू बहा लेती है । अपने दर्द को आँसू के रूप में कुँवर को नहीं दिखालाना चाहती वह । जानती है की कुँवर को बहुत चोट लग जायगी इससे । अचल उसका धन नहीं, मैना की अमानत है । यही सोचकर अपने सन्तोष दे लेती है ।

कुँवर नींद में सोया है अभी । कविता उठ कर बाहर आ गई है । इधर उधर देख कर अपने दुख को इधर-उधर करना चाहती है । चबूतरे पर बाहर बैठ कर फाटक की ओर देखने लगी है ।

लोहे के फाटक पर चढ़कर ललित झूँन रहा है अपने बच्चे को गोद में लेकर गुलनार भी पास ही हैं । कविता को कुछ भी सुख नहीं आजकल कि छोटे ललित को भी जरा प्यार करले कभी । पति की बीमारी से बेचैन हो गई है वह ललित भी आजकल उसकी ओर आकर्षित नहीं होता । अब तो काफी बड़ा हो गया है । कुछ सोचने की शक्ति भी आ गई है । आग-पानी में भेद समझने लगा है ।

अपनी ओर से माँ को निराश देख, उसने भी मुख मोड़ लिया है । वह तो बच्चा है, माँ का प्यार न सही, किसी और की ममता से ही संसृष्ट हो लेता है । दुःखमुँहा तो है नहीं कि कविता के बगैर न रह सके । अधिकतर रानी माँ के पास ही बना रहता है । रानी माँ भी पड़ी-पड़ी अपना वक्त काट लेती है उससे दो बातें करके । भारी मन को हलका कर देती है ललित की भोली मुस्कान ।

कविता ही कभी-कभी ललितके लिये लालायित हो उठती है । फाटक से खेलते ललित पर उसकी दृष्टि पड़ी तो उसका कुछ दुःख दूर हो गया ।

“ललित !...ओ ललित !...मेरा राजा बेटा !...यहाँ आओ !”
पुकारा कविता ने ।

ललित ने फिर कर देखा सिर्फ और फिर मुँह फेर कर लोहे के
फाटक की गाड़ी चलाने लगा ।

“ललित !...नहीं आता !” करुण स्वर हो उठा कविता का ।
कोई उसकी पुकार नहीं सुनता ! उसके ज़िगर का टुकड़ा भी नहीं !

“नहीं !” चिल्ला कर कहा ललित ने ।

“अच्छा तो फिर मैं ही आती हूँ....भागोगे तो दौड़ा कर पकड़
लूँगी ।”

लेकिन हठी ललित क्यों मानने लगा । वह भागा तेजी से किल-
कारी भरता हुआ, चंचल के महल की ओर । कविता भी दौड़ पड़ी
उसके पीछे ।

नारी जब तक माँ नहीं बनती तब तक पति की सेवा में खोयी रहती
है, किन्तु माँ बनने पर उसका सारा प्यार अपनी सन्तान पर केन्द्रीभूत
हो जाता है । इस समय कविता का मातृत्व सजग हो उठा ।

वह दौड़ रही है और भागते ललित को सचेत भी करती जा
रही है ।

“देखो...आगे पत्थर है...तेज मत भागो बेटा !.... नहीं तो ठोकर
लग जायगी ।”

लेकिन ललित तो अपने धुन का पक्का है । बोलता है—“पहले
पकलो तो छुड़ी ।” उसकी तुतलाने की आदत अभी अच्छी नहीं
हुई है ।

सामने से कोई जमीन निहारता आ रहा है और ललित भी बेखबर
है । वह नहीं चाहता कि रुककर माँ की पकड़ में आ जाय ।

छैला—२

भागता ललित थोड़ी दूर आगे बढ़ा ही था कि आने वाले व्यक्ति से टकरा गया । कविता घबड़ा उठी ।

मगर गिरा नहीं ललित ! वह आनेवाले व्यक्ति के पैरों से लिपट गया ।

बोला—“आन्टी !...अमको...बचाओ...” दौड़ने के कारण हाँफ रहा था वह ।

“जरूर बचायेगा...But....” कहते-कहते उसकी नजर कविता पर पड़ी ।

“एनी !...इसने मुझे थका डाला ।” कविता पास आकर बोली ।

एनी ही थी वह । ललित एनी को आन्टी ही कहा करता है उसे यही सिखाया गया । एनी अधिकतर महल ही में रहती है अब ! कभी-कभी अपने घर भी चली जाती है ! चंचल से जुदा होने की तमन्ना नहीं उसकी । परिवार का सदस्य बन गई है ।

“हमको Kiss देगी ?” एनी ने ललित से पूछा ।

“यस !” कहकर ललित ने अपना मुँह एनी के रक्तिम अघरों से सटा दिया ।

“और मुझे !” कविता ने माँगा ।

“नो !” ललित बोला ।

‘यस’ और ‘नो’ एनी ने पढ़ाया है उसे ।

“क्यों ?”

“लात में अमको अपने पाछु क्यों नहीं छुलाती ?” ललित ने शिकायत की ।

कविता कैसे समझाती उसे अपनी विवशता ।

“आज सुलाऊंगी...राजा-रानी की कहानी भी सुनाऊंगी...मुझे दो ।” कहकर कविता ने अपना मुँह ललित को चूमने के लिये बढ़ाया ।

तभी—

“गजब हो गया सरकार !...इज्जत कुंवर साहिब अपना सर फोड़ रहे हैं।” गुलनार चीख पड़ी।

कुंवरांनी ने सुना और एनी ने भी। बदहवाश होकर दोनों दौड़ पड़ी महल की ओर।

देखा कुंवरांनी ने। पागल-सा अचल मैना के स्मारक पर अपना सर पटक रहा है कई जगह से खून झँकने लगा है।

उसने दौड़कर पकड़ लिया अचल को। कुंवर ने विक्षिप्त आँखों से कविता की ओर देखा। चिल्ला उठा—“मैना। मेरी मैना !....तू आ गई...”

आवेश में कुंवरांनी को मैना समझकर अचल ने अपने आलिंगन में जकड़ लिया उसे।

कितना सुख मिला कविता को। काश ! वह मैना बन पाती। उसकी आँखों से आँसू बह चले। पता नहीं खुशी के या गम के।

“अन्दर चलिये।” अपनी ओर निहारते अचल से कहा उसने।

अचल के कानों में जब कविता का स्वर घुसा तो उसकी चेतना लौटी, ज्ञानतन्तु सजग हो उठे। उसने मैना की जगह कविता को पाया।

कुंवर को पलंग पर लाकर लिटाया कविता ने। थोड़ी ही देर में वारिस डाक्टर दास के साथ आया। रानी माँ भी आईं।

अचल अर्ध पागल-सा सबको घूर-घूर कर देख रहा है।

रानी माँ, कविता और डाक्टर साहब अचल के पास बैठे हैं। पास ही खड़ा वारिस अपने आका की हालत पर जान कुर्बान करने के लिये तैयार है।

छैला—२

“इसे क्या हो गया है डाक्टर !...कुछ भी पता नहीं चलता...”
रानी साहिबा की आवाज असह करुणा से भीगी थी ।

“घबड़ाने की बात नहीं...कोई खास बीमारी नहीं है ।” सान्त्वना देने के ख्याल से बोला डाक्टर ।

कुँवर आँखें बन्द टुकिये पड़ा रहा । इन लोगों की बात भी सुनता रहा और मैना की याद भी करता रहा ।

डाक्टर दास दवा देकर चलने लगे तो रानी साहिबा भी उनके साथ बाहर आई ।

आधे घंटे बाद—

कुँवर की आँखों में नींद झूलने लगी । झपकी लेते सो गया वह तो कविता भारी मन लिये खिड़की पर आ बैठी । आसमान की ओर देखने लगी । अपने बेकरार दिल को उड़ते बादलों में उड़ा दिया उसने, किन्तु ठंडी-ठंडी बूँदें बरसाने वाले बादलों ने भी शान्ति नहीं दी कविता को ।

उसका मन बैठन लगा । अज्ञात आशंका से दिल घड़का । आँखों में अन्धकार अपने डैने फैलाने लगा । मगर वह रही गंभीर, मौन ।

“हाय राम, हाय सीता ! अब क्या होगा !....तुम चुप हो मुन्शी लाला !....रचना का पेट फाड़ दिया जायगा तो बियेगी कैसे !”

“धीरज रखो भाभी ! समझे की नहीं !...यह सब डाकटरी की बातें हैं...अधिक चिह्ल-पों मचाने से फायदा क्या !...लोग जानेंगे तो क्या कहेंगे....शंकर जी की पूजा करो, समझे की नहीं ! कालिका माई को प्रसादी चढ़ाओ...सब भला होगा ।”

“इधर रचना के पेट में सॉप, उधर सबल की देह में सॉप का बिष... हाय राम, हाय सीता ! मुआ महँगू भी नहीं आया खबर लेकर...”

“मुन्शीआइन की कसम ! दुनिया में सॉप बढ़ते जा रहे हैं...कुछ दिनों में सभी जगह सॉप ही सॉप ! समझे कि नहीं !...मैं जरा दरवाजे पर पता लगाता आऊँ, आया कि नहीं महँगू !” कहकर मुन्शी जी दरवाजे पर चले गये ।

परोसन और मुन्शी दोनों आकस्मिक विपत्ति से अपना ज्ञान खो बैठे थे । किर्तब्यविमूढ़-से हो गये थे वे ।

परोसन उठकर कमरे में सोयी रचना के पास गई। उसने रचना को नहीं बताया था पेट के साँप के बारे में।

“दादी !...मेरे पेट में साँप है क्या ?” विचित्र स्वर था रचना का।

“न !...नहीं तो...”

“छिपाती हो दादी !...मुझे सब मालूम हो गया !” रचना का स्वर गंभीर था।

सुना परोसन ने तो चमककर उसकी ओर देखने लगी—“हाय राम, हाय सीता !...कैसे जाना ? किसने कहा ?”

“अभी तुम्हीं तो कह रही थीं मुन्शो दादा से...मैया की खबर मिली कुछ ?”

“राम जाने क्या हुआ उसे ?”

“राम क्या जानेंगे तुम्हारे !...चलो यह भी ठीक ही है।”

“क्या ?”

“यही कि भाई-बहन की अर्थी एक ही साथ निकलेगी।” करुण और निराश आवाज थी रचना की।

“चुप रह छोरी !....तेरे मुँह में कीड़े पड़ गये हैं क्या ?....हाय राम, हाय सीता ! हमेशा असगुन ही बोलती है...”

“मुँह में कीड़े तो नहीं, पेट में साँप ज़रूर है...”

साँप !

रचना की आत्मा सिहर उठी ! विचित्र अनुभव होने लगा उसे। उसे लगा जैसे पेट में फन उठा कर साँप नाच रहा हो। उसकी सारी देह रोमांचित हो उठी। हृदय की धड़कन रुक-रुककर चलने लगी। मस्तिष्क भय से भर उठा। चेहरे पर पसीने की बूँदें चुदचुहा आईं।

कैसे गया उसके बेट में साँप ?

वह अनुभव करने लगी—उसके पेट में लम्बी-लम्बी चीज उलट-पुलट रही थी चीख पड़ी रचना ।

अपने भयग्रस्त दिमाग को सन्तोष देने लगी वह । यह गलत है । सॉप डेंस सकता है, पेट में नहीं जा सकता । डाक्टर झूठ बोल गया है । बहुत प्रयत्न के बाद भी रचना अपने मन के सॉप को मार नहीं सकी । आँख मूँद कर चिन्ता में डूब गई । उससे भी शान्ति नहीं मिली तो उठकर टहलने लगी ।

रचना का सौन्दर्य बिखर गया था । सोने सी चमकदार देह सूख कर काजल बन गई थी आँखों के चारो तरफ गह्वे पड़ गये थे । चेहरा काला पन लिये उदास रहता था हरदम । लगता था जैसे टी० बी० हो गया हो ।

उधर मुंशीजी थके-थके सर झुकाये अपनी अलबेली चाल पर थिरकते चले जा रहे थे ।

किसी की आइट पाकर चौंक पड़े । सामने देखा—अजीब शकल दिखाई पड़ी उन्हें फाटक पर विचित्र पोशाक में एक लड़की खड़ी थी ।

अपना चश्मा सँभाल कर वे घूरने लगे । अजगर के चमड़ों की भेष-भूषा देखकर चकित रह गये । अभी तक तो सँपेरे को ही ऐसी वस्त्रों में देखा था, उन्होंने । लेकिन यह तो लड़की है, सँपेरा नहीं । वे पास गये, उसे गौर से देखने लगे, घूर-घूर कर ।

“ऐ ! कौन हो तुम ! समझे कि नहीं ! यहाँ क्या लेने आयी हो !”

मुंशी जी को देख कर घबड़ा उठी युवती ।

“यह मेरी बहन है सरकार !” तभी सँपेरे ने आकर कहा ।

“सँपेरा तुम हो !...कैसी तबीयत है ठाकुर राजा की !...समझे कि नहीं साफ-साफ कहो...महँगू कहाँ मर गया !” मुंशी जी सुनने के लिए आतुर हो उठे ।

“कुछ नहीं हुआ सरकार !”

“कुछ नहीं हुआ सरकार !”

“कुछ नहीं हुआ...” मुंशीजी के कदम लड़खड़ा गये। उसके मुँह के कोँवे फुर्र हो गये। पैरों के नीचे जमीन खिसकने लगी।

“मुंशी बाबू !...तुम्हें तो जवानी कसम, मिरगी आ गयी...” आकर महुँगू ने मुंशीजी को सहारा दिया।

“जल्दी बोलो कुछ...समझे कि नहीं ? नाक के बालों में साँस अटकती है !” मुंशीजी ने अपना सारा भार महुँगू के ऊपर डाल दिया।

“मिठाई खिलाओ सरकार !...राजा साहब सेदहाँ में जिन्दगी पाकर मेहमानी बजा रहे हैं।”

सुना मुंशीजी ने तो उसकी साँस भीतर गई। पाँव में शक्ति आ गई। पैरों तले की भागी घरती फिर वापस आ गई।

“भीतर चलो समझे कि नहीं...तुम्हें इनाम दूँगा—हाँ !”

“ठनाठन दो सरकार !”

“ठनाठन क्या !....समझे कि नहीं ..पहेली मत बुझाओ”

“नगदनारायण मुंशी बाबू !....आज हौली आवाद करूँगा.... तुम्हारे लिये भी एक अर्द्धा लेता आऊँगा ! समझे कि नहीं ?”

“अच्छा-अच्छा !” मुंशीजी भीतर दौड़े, परोसन और रचना को खुशखबरी सुनाने के लिए।

“भाभी ओ भाभी !...आनन्द मनाओ, समझे कि नहीं ?” बाहर से ही चिल्लाते जा रहे थे मुंशीजी।

रचना ने सुना तो खिल उठी। इतनी खुशी हुई उसे कि पेट में दर्द उभर आया। खुशी के मारे। शायद पेट का साँप क्रोधित हो उठा या खुशी के मौके पर।

सभी उसी की ही सेवा में जुट गये। चमकी और कुबिले उस करुण हृदय को देखने लगे।

छैला—२

घंटे भर बाद—

ठीक हो गई रचना । चमकी और छुबीले से बातें करने लगी, पलंग पर पड़े ही पड़े । उदास चमकी आँखों में दुःखार्चय भरे महल के भीतरी आकर्षण को देख रही थी ।

देखते-देखते उसने एक चीज देखी । उसकी दृष्टि वहाँ रुक गई ।

वह थी एक तस्वीर किसी नवयुवक की, हसीन-सी ।

“छैला !” खुशी से चीख पड़ी चमकी ।

“क्या है...क्या बात है ?” रचना ने पूछा ।

“वह देखिये सरकार ! मेरा छैला !...मेरा परदेसी !” दौड़कर चमकी ने तस्वीर हाथों में ले ली । उसकी ओर देखकर कहने लगी—
“बोलो जी परदेसी !...चुप क्यों हो तुम !...मैं तुम्हारी चमकी हूँ... नहीं पहचानते...एकटक मत देखो... कुछ बोलो तो सही...”

मगर बेजवान तस्वीर भला क्यों बोलती ? चमकी उसे कलेजे से लगाकर सिसक पड़ी ।

मगर उसका छैला पिघला नहीं । कुछ बोला भी नहीं ।

रचना ने चमकी को समझाया—“यह तस्वीर मेरे भाई की है... और तस्वीर बोलती नहीं चमकी !” रचना ने कहा ।

“लेकिन यह देखती क्यों है सरकार !”

चमकी के प्रश्न पर मौन रह गई रचना । वह समझ नहीं पायी कुछ । आखिर छुबीले ने सारी कहानी कह सुनाई ।

रचना सुनकर गंभीर हो उठी । उसका भाई भी तो जंगल में शिकार खेलने गया था और फिर लौटा नहीं ! कहीं वही...वही । चमकी उसके भाई की तस्वीर देखकर ही तो चीखी ।

“क्या नाम था तुम्हारे छैला का ?” रचना ने घड़कते दिल से पूछा ।

“शीतल नाम था सरकार !” छुबीले ने कहा ।

“शीतल !...” रचना एक बार फिर चौंकी—“क्या कहा—शीतल !...यही नाम तो मेरे भाई का भी था । जंगल में शिकार खेलने गया था...फिर वापस नहीं लौटा !...कहाँ है वह ?”

“वह अब नहीं हैं हजूर !...उसे...उसे तो...” कहते-कहते रुक गया छुबीले ।

“मेरे शौहर ने सॉप डेंसा दिया सरकार !...मैं छुट गई !” कहकर रोने लगी चमकी ।

रचना ने सान्त्वना दी उसे । आँसू रोककर सुबकती रही चमकी ।

अपनी शंका मिटाने के लिये बहुत कुछ पूछा रचना ने । चमकी और छुबीले ने उसका सही-सही उत्तर दिया । रचना को विश्वास हो गया कि उसी का भाई शीतल, चमकी का छैला था ।

“चमकी तुम यही रहोगी अब !...तुम्हारा घर है यह...तुम्हारे छैला का घर...” बोली रचना अपनत्व भरे स्वर में ।

सुनकर चमकी विभोर हो उठी । उसे आन्तरिक सुख मिला । बोली—“सरकार !...यह मेरे छैला का घर है न !...यहाँ की मिट्टी में जान जायगी मेरी, तो धन्य हो जाऊँगी !” कहते-कहते चमकी का गला भर आया ।

चमकी को छैला न मिला, किन्तु उसका घर तो मिला । नारी के लिये अपने पति के घर में थोड़ी जगह मिल जाय, इतना ही पर्याप्त है । गम के आँसू को याद के दामन से पोंछ कर सन्तोष कर लेगी । चमकी के लिये वहाँ का हर जर्ग पूजनीय बन गया ।

×

×

×

चमकी और छुबीले आपस में दुख-सुख की कहानी कह सुन रहे थे । चमकी बहुत प्रसन्न हो रही थी । उसका छैला कितना बड़ा आदमी था । जब उसकी सूरत आँखों में तैर उठती तो जुदाई के आँसू

छैला—२

पलकों की कोरों पर चमक उठते । लेकिन उसे बहने नहीं देती वह ।
सँजों कर रखती, अमूल्य निधि समझ कर ।

“छबीले भैया !....आगे कहो, मुझे जब नदी में फेंक दिया चिकोरा
ने तो क्या हुआ !”

“इन्सान जोश में अन्धा हो जाता है चमकी !....लेकिन जब होश
में आता है तो अपने किये पर पछतावा ही हाथ लगाता है उसे...तुझे
खो कर चिकोरा भी मरने पर उतारू हो गया...”

सारी घटनायें सविस्तार सुनाने लगा छबीले । चमकी सतर्क कानों
से सुनने लगी—

×

×

×

अन्धेरी रात !

चिकोरा विदग्ध हृदय लिये चमकी की लाश लेकर नदी के किनारे
खड़ा हुआ ।

एक बार, सिर्फ एक नजर उसने हसरतभरी निगाहों से चमकी के
चमकते चाँदनुमा चेहरे को देखा । उसके चेहरे की शान्ति देखकर उसका
दिल कसक उठा ।

पहाड़ जैसा सँपेरा रो पड़ा । अपनी अन्तर-वेदना पलकों की ओट
में छिपा नहीं सका । उसको इच्छा हुई कि जिला ले चमकी को, किन्तु
जब परदेसी छैला की आकृति याद आई उसे तो चमकी से भी घृणा हो
गई उसे ।

उसके हाथ उठे । हवा का तीव्र झोंका आया और—

छप ।

सन्नाटा चीख पड़ा । चमकी की लाश लेकर लहरें ‘राम नाम सत्य’
का शोर मचाती अनिर्दिष्ट दिशा की ओर बह गई ।

चिकोरा ने आँखें मूँद लीं ।

कितना कठोर, कितना निष्ठुर और स्वार्थी है वह !

चाहता तो चमकी को जिन्दागी देकर जिन्दा कर लेता । लेकिन—

लेकिन चमकी तो उससे प्यार करती नहीं थी । जीवन पाकर वह उससे नफरत करतो और छैला से मुहब्बत । वह अपने परदेशी के वियोग में पागल रहती ।

एक मर्द यह कैसे बरदास्त कर सकता कि आँखों के आगे ही उसकी औरत गैर मर्द के लिये आँसू बहाये, तडपे ।

चिकोरा भी मर्द था । उसके लिए भी यह नाकाबिलेबर्दाश्त था कि चमकी उसे छोड़कर किसी और में नजरें लड़ाये, नजारा लूटे ।

वह उठ कर गाँव चला आया । अपनी भोपड़ी में आकर आँसू बहाता रहा, न चाहकर भी ।

बीती बातें याद आने पर रोता, क्रोधित हो उठता और हँसता भी । धीरे-धीरे पागल जैसा होने लगा वह ।

कितना प्यार करता था चमकी को वह !—

मगर अन्त में चमकी का खून कर दिया !

वह खूनी है !

टिकोरा की ही तरह ।

उसके मन में अपने प्रति घृणा उदित हो उठी । रलानी से अपना सर पटकने लगा वह ।

गले में लिपटे साँप को देखा उसने । कितना भयानक है यह साँप । इसी साँप की तरह वह भी साँप हो गया है ।

साँप का जहर उतारने वाला सेंपेरा स्वयं अपने जहर से मात हो रहा था !

उसे साँप से नफरत होने लगी । साँप न होता तो क्या मजाल कि किसी की मौत इतनी जल्दी आ जाती ।

छैला—२

उसने साँप को मंत्र से बाँधकर जमीन पर पटक दिया। मंत्र की आग से चलने लगा मणिघर ! फौं-फौं फुँककारने लगा वह। उसके मुँह से चिनगारियाँ छिटकने लगीं।

“उस्ताद !” तभी किसी ने पुकारा—“यह क्या कर रहे हो...यह बड़े उस्ताद का साँप है...इसे पुजोगे तो ताकत मिलेगी....मारो मत इसे।”

“तुम चुप रहो छुबीले !...खबरदार जो मेरे काम में दस्तन्दाजी की...आज गाँव का कोई भी साँप जिन्दा नहीं रह पायेगा...” और मंत्र पढ़ता रहा चिकोरा।

थोड़ी देर छुटपटानेके बाद साँप फन उठा कर झपटा और उड़ चला बाहर की ओर। चिकोरा का मंत्र उस पर कोई अधिकार नहीं जमा सका।

“अपनी खैर मनाओ उस्ताद !...साँप ने नुकसान नहीं पहुँचाया नहीं तो कुचलने वाले को साँप कभी माफ नहीं करते....देवता था वह !” बोला छुबीले।

उस्ताद फेरई का साँप उड़ गया पता नहीं किधर, किन्तु दूसरे दिन लोगों ने अपनी पिटारियाँ खोलीं, देखा—सारे साँप मुर्दा थे।

लोगों को मालूम हुआ तो चिकोरा को कहने आये। चिकोरा ही तो था उस समय सरदार।

लेकिन चिकोरा की झोपड़ी खाली थी। छुबीले भी गाँव में नहीं था। लोग कुछ समझ नहीं सके। सँपेरे समझ गये कि यह करतूत चिकोरा की ही है। सभी के दिलों में चिकोरा के लिए घृणा पैदा हो गई पर मन मसोस कर रह गये सभी।

और इधर !

चिकोरा और छुबीले घनघोर जंगल के दैत्याकार वृक्षों की छाया के नीचे-नीचे बड़े जा रहे थे पता नहीं कहाँ !

छैला—२

चिकोरा आगे था और छुबीले पीछे ! दोनों मौन थे, जंगल के सजाटे की तरह ।

दोनों अनजान दिशा की ओर बढ़ते जा रहे थे और जंगल की सघनता बढ़ती जा रही थी । साथ-साथ अँधेरा भी गाढ़ा होता जा रहा था । कटीली झाड़ियों का समूह ही अधिक चुभने लगा था । जंगली लतायें पैरों में उलझ-उलझकर अवरोध डाल रही थीं । कभी-कभी जंगली जन्तुओं का विचित्र-विचित्र स्वर जंगल की शान्ति भंग कर देता था ।

मगर दोनों चल रहे थे, जैसे मौत का कोई भय ही न हो उन्हें ।

थोड़ी देर बाद ही भयानक जंगल में काली रोशनी छा गई । रात आ गई किन्तु चिकोरा रुका नहीं और छुबीले रुकना चाहकर भी उसका अनुसरण करता रहा ।

कुछ दूर चलने पर छुबीले को मशाल की रोशनी दिखाई पड़ी । उसने सोचा, शायद कोई गाँव है । उसने वहाँ रुकने का हृदय निश्चय कर लिया ।

तभी—

आगे चलता चिकोरा चीख उठा । उसके ऊपर कोई चीख आ गिरी थी—ठंडी-ठंडी, बर्फ जैसी ।

छुबीले लपका । उसके मुख से भी चीख निकली ।

एक अजगर था, करीब अट्हाईस फीट का, विशाल—भयानक ।

स्तब्ध रह गया छुबीले । अपने सँपेरा जीवन में उसने अब तक उतना भयानक अजगर नहीं देखा था ।

चिकोरा को कसे जा रहा था वह खूँखवार ! चिकोरा अपने बचाव के लिये युद्ध कर रहा था । अपनी सारी शक्ति से लड़ रहा था अजगर से । किन्तु उसके हाथ में कोई अस्त्र नहीं था । अपने हाथों और दाँतों से जानवर बनकर अजगर को काटने लगा वह । जब वह अजगर के

छैला—२

ठंडे शरीर में दांत गड़ाता तो मिचली आने लगती । विचित्र तरह का स्वाद था अजगर के मांस का ।

लेकिन इस वक्त तो अपनी रक्षा कर रहा था । मौत की चाह रखने वाला चिकोरा, जिन्दगी के लिये काल से लड़ रहा था । अजीब बात थी ।

लेकिन मौत से कब तक लड़ता कमजोर मानव ! दूसरे ही क्षण एक भयंकर फुत्कार अजगर के मुँह से निकली और उसके भयानक जबड़े में चिकोरा का सर चला गया ।

छुबीले चीख कर सजग हो उठा । अपनी कमर से छूरा निकाल कर अजगर के शरीर पर वार करने लगा । साथ ही मंत्र भी पढ़ने लगा । किन्तु अजगर पर कोई असर नहीं हुआ छुबीले के तेज छूरे और खंतर-मंतर का । चिकोरा को निगल ही गया वह ।

“उस्ताद !” छुबीले चीख पड़ा ।

उसी समय ।

घोंय की आवाज से जंगल का जर्जर-जर्जर काँप उठा । अजगर का शरीर लड़खड़ा कर जमीन पर सीधा हो गया !

×

×

×

कहानी सुनकर काँप उठी चमकी । कितना दुखद अन्त था चिकोरा का ! उसके मन में कण्ठा उत्पन्न हुई, किन्तु क्षणिक । चिकोरा ही ने तो उसकी दुनिया उजाड़ी, तब वह क्यों बहाये उसके लिये आँसू ।

“उसके बाद राजा साहब मुझे अपने साथ लिवा आये...इसके बाद की बात मालूम ही है तुम्हें !” कहकर ठंडी सॉस ली छुबीले ने—“तुम्हारे छैला का घर मिल गया । इससे बढ़कर सन्तोष और क्या होगा ?”

थोड़ी देर बाद चमकी उठकर भीतर चली गई । छुबीले दरवाजे पर

ही बैठा रहा । कुछ दूर पर मुन्शीजी बड़ी-खाता उलट रहे थे चबूतरे पर बैठा महुँगू खैनी रगड़ रहा था ।

मुन्शी जी की ध्यानावस्थित देखकर महुँगू को रश्क होने लगा जैसे । उठकर उसके समीप आया वह । मुन्शीजी की नाक के पास दोनों हाथ ले जाकर बजाया उसने । खैनी की गैस-भरी चूर्ण जब मुन्शीजी की नाक में घुसी तो दनादन छीकने लगे ।

“नालायक ! पाजी...आंकड़ों—उल्लू का पट्टा...समझे कि.... आंकड़ी नहीं...तुम्हें निकाल दूँगा...आं—आंकड़ों !”

महुँगू हाथ जोड़े मुन्शीजी की हर छींक पर माफी मांगे जा रहा था और कहता जा रहा था—“सरकार ! यह जेठवार की खैनी है.... बड़ी तेज...जरा चखकर तो देखो ।”

तभी भीतर से परोसन की चीख सुनाई पड़ी । सभी बदहवास से भीतर दौड़े । देखा रचना फर्श पर छटपटा रही थी, मुँह से खून की कै हो गई थी । एक हाथसे कलेजा थामे थी वह और दूसरेसे दाबे थी पेट ।

बफादार महुँगू किसीके हुक्म के बगैर शहर दौड़ पड़ा डाक्टर बुलाने ।

उधर महुँगू घोड़े से शहर की ओर जा रहा था और इधर एक सवार हवेली के फाटक पर उतरा ।

कोई पहरेदार नहीं था । सभी लठैत पता नहीं कहां मर गये थे । मरे कहां ये बेचारे ?—भीतर रचना की हालत पर आँसू बहा रहे थे । सन्नाटा देखकर सवार चकित हुआ ।

घड़घड़ाता अन्दर घुस पड़ा वह, किसी की आज्ञा के बगैर । इधर-उधर देखता भीतर चला जा रहा था । किसी नये मोड़ पर घूमनेके लिये सोचना नहीं पड़ता था उसे, जैसे घर की हर एक राह उससे परिचित हो ।

वह भी वहाँ पहुँचा, जहाँ मुन्शीजी घबड़ाये से खड़े थे, परोसन कुल देवता को याद कर रही थी । छुबीले और चमकी चित्र-लिखित से

मौन ये और । और रचना थो फर्श पर बेहोश । उसका सर परोसन दादी की गोद में था दो-चार लठैत हाथ बांधे बाहर आशा का इन्तजार कर रहे थे ।

बाहर के लठैत आने वाले व्यक्ति को देखकर बगल हट गये । कमरे के भीतर चला गया आगन्तुक ।

“रचना ।” आने वाला व्यक्ति चीख पड़ा—“इसे क्या हुआ दादी !”

“सजल बेटा !...इसके पेट में सांप है....”

सजल ही था वह । सुनकर चौंक पड़ा । चमकी और छुबीले ने भी सुना । सजल परेशान हो उठा । अभी-अभी सेदहान से अपना जीवन लेकर आया वह, लेकिन यहां उसे देखने को मिला मौत का मंजर ! देखकर दुख सागर में टूटे किनारे-सा भहरा पड़ा ।

दो घंटे बाद आंवी की तरह आया महुँगू, डाक्टर, लेकर ।

दादा दी डाक्टर ने । चैतन्य हुई रचना । डाक्टर ने सारी बातें बतायी सजल को । आपरेशन की भी सलाह दी ।

“आपरेशन हो या चाहे जो हो....मुझे रचना की जिन्दगी चाहिये डाक्टर !...रुपये की चिन्ता आप न करें !...लेकिन पेट में सांप गया कैसे !...बड़ी अजीब बात है ।” पशोपेश में पड़ा था सजल ।

“अंधकार में पानी पीने से !”

“क्या मतलब !”

“लोग अंधेरे में पानी पी लेते हैं...यह गांव है, पानी कुयें से आता होगा...कभी-कभी कुयें में सांप चला जाता है....उसके अंडे पानी में फूट जाते हैं...उसके बच्चे पानी में तैरने लगते हैं....कोई पानी भर कर ले आया और पी गया बिना देखे...कुछ पता भी नहीं लगता है । भीतर जा कर बढ़ने लगता है—बस !” डाक्टर ने कहा ।

छैला—२

डाक्टर के जाने पर सजल व्यग्र होकर टहलता रहा । छुबीले बितित सबल के पास आकर खड़ा हो गया । बोला—“हजूर !”

“क्या है ?” चौंक पड़ा सजल ।

“सरकार ! अगर आप हुक्म दें तो गरीब कुछ खिदमत करे....मैं सेंपेरा हूँ हजूर !...साँप के हर रोग का इलाज जानता हूँ....सेदहां के लोग साँप का जहर छूकर रफा कर सकते हैं, लेकिन पेट के साँप को छूकर निकाला नहीं जा सकता...सेदहां का दैवी चमत्कार देखा सरकार ने, अब जादू-मंत्र का कमाल भी देखें । मैं रचना बहन के पेट का साँप निकाल सकता हूँ...बहन की जिन्दगी की जिम्मेदारी छुबीले की...”

छुबीले को आशा मिल गई ।

रचना अब तक शिथिल होकर पलंग पर पड़ी थी । छुबीले ने सबको वहां से हटा दिया । स्वयं भी कमरे के बाहर चला आया ।

भीतर सिर्फ चमकी, रचना को अपनी गोद में लेकर जमीन पर बैठ गई । रचना के शरीर से कपड़े का आवरण हटा दिया गया । आपस में सटी जाँचों को अलग कर दिया गया ।

कमरे में आग जलाई गयी । मयूर-पंख के धुएँ से सारा कमरा ढँक गया । रचना और चमकी बेमौसम के बादलों में खो गये ।

बाहर छुबीले को आँखें बन्द हो गईं । उसके हाँठ कुछ बुदबुदाने लगे । उसका दाहिना हाथ जमीन पर साँप की टेढ़ी-मेढ़ी चाल से आगे पीछे चलने लगा । थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह जमीन से धूल उठाकर, मुँह से फूँक मारकर, कमरे की ओर कर देता ।

सेपेरे की कला स्तब्ध होकर सभी देख रहे थे । और होने वाली बात का इन्तजार कर रहे थे । रचना भीतर से कभी-कभी कराह उठती थी

सबल बेचैनी से चहलकदमी करने में मशगूल था ।

करीब एक घंटे तक यही क्रिया चलती रही—

उसके बाद ।

उसके बाद कोई चीज कमरे से रेंगती हुई छबीले के पास आकर रुक गई ।

लोगों ने देखा—करीब एक फीट लम्बा सांप था, दुबला पतला ।

सभी चकित थे और प्रसन्न भी ।

हर्षाश्चर्य का विचित्र समन्वय हो गया ।

दूसरे दिन—

सभी शोक-मुक्त होकर बिहँस रहे थे ।

छबीले ने कहा—“सरकार !...अब मुझे हुक्म दिया जाय... अपने देश लौट जाऊँ मैं !...मरने चला था हज़र ! लेकिन सभी को जिन्दा देख, अपनी भी तबियत जिन्दगी पर ही आ गई है ।”

“छबीले भैया ! क्या कहते हो तुम !...गांव जा रहे हो—सच-मुच ! लोग मार डालेंगे तुम्हें...सभी गुस्से में हैं...” किमी के बोलने के पूर्व चमकी बोल उठी ।

रचना ने भी हाँ में हाँ मिलाया ।

“मुझे सिर्फ मौत मार सकती है चमकी ! इन्सान की इतनी हस्ती कहां ?...” कहा छबीले ने—“बूढ़ी मां मेरे वगैर मर जायगी हज़र !...चमकी को खुशी देख घर जाने की तमन्ना हो गई है...चमकी मेरी बहन है सरकार ! और यह घर चमकी का है...बहन के घर में भाई का रहना नाभुमकीन...मुझे माफ करें । दया बनाये रखें केवल...अब तो रिश्ता कायम हो ही गया है । आना-जाना तो लगा ही रहेगा । यह तो दुनिया का पुराना रिवाज है ।”

आखिर दृढ़ छबीले ने अपनी जिद पूरी की । जाते वक्त सजल जब छबीले को काफी रुखा देने लगा तो इनकार कर गया वह ।

बोला—“दौलत की भूल मुझे नहीं बाधू !...आपने मुझे जिन्दगी

छैला—२

दी है। जिन्दगी से बढ़कर एक चीज और मो दी—“वह है मुहब्बत !....
मुहब्बत के आगे दुनिया की हर एक चीज नाचीज हो जाती है राजा
साहब !”

चमकी के आग्रह पर एक रोज और रुक गया छुबीले ।

दूसरे दिन जाने लगा तो रो पड़ी चमकी । बोली—“सब से मेरा
कुशल छेम कह देना भैया !...जरा सेदहां जाकर मोहन के बाबा से भी
मिल लेना...अगर उसके बाबा ने नदी से मुझे नहीं निकाला होता तो
चमकी इस दुनिया में नहीं होती....कभी-कभी आना नहीं भूलना...”

छुबीले चल पड़ा । चमकी रो पड़ी । रचना का दिल भी सहानुभूति
से भर उठा । छुबीले उसके जीवन का रक्षक बनो था ।

कविता चुपचाप सूखे पेड़ की ठूँठ की सेवा कर रही है। देखना चाहती है कि कब उसमें वरदान के किसलय निकलते हैं।

रानी साहिबा दिन रात भगवान के आगे अपनी बूढ़ी भोली फैलाये रहती हैं।

“नये घर की दीवार मत गिरा भगवान !” उनकी प्रार्थना है—
“उजड़े घर पर ही हाथ फैला दे...मुझे फिर से बीमार कर दे...मेरे बेटे की जान लेने के पहले मेरी जिन्दगी का गला घोट दे तू !....तेरा इंसान मेरे आँचल में धँसा लगा देगा....दुनिया कहेगी—सौतेली माँ अपने बेटे को खा गई !”

भगवान रहता है तो आसमान में, जहाँ इन्सान की आवाज पहुँचते-पहुँचते बिखर जाती है। आसमान छोड़कर जमीन पर आता है भगवान तो पत्थर बन जाता है ! और पत्थर के दिल में स्पंदन कहाँ, जो इन्सान के दर्द का अन्दाजा लगा सके। कितनी बड़ी मजबूरी है यह।

आज तो अचल की हालत कल से अधिक खराब है ! उसका पागलपन तेजी से बढ़ता जा रहा है । चाँदनी रात के ज्वार-भाटे की तरह कभी बड़बड़ाता है तो कभी चुप हो जाता है । उसकी जबान सिर्फ मैना की रट लगाती रहती है ।

बड़ी पशोपेश में पड़ गई है कविता । कहाँ से लाये वह मैना को । बेचारी दिल में आग, आँखों में अन्धकार और जिन्दगी में मौत लिये बैठी है । वह अपने विद्विप्त पति को सान्त्वना देती है, धीरज बँधाती है, मैना को लाने का झूठा वादा भी करती है । तब जाकर कुछ शान्त होता है कुँवर । लेकिन वह बच्चा नहीं, जो झूठ भी न पढ़चान सके । थोड़ी देर बाद फिर 'मैना ! मैना !' चिल्लाने लगता है । कहता है—

“सरकार ! आप मुझे छोड़ दें...मैना सिर्फ मेरी आवाज पर आ सकता है...आपका इशारा उसके लिये कुछ नहीं...और इस कैद से मेरी आवाज उसके कानों तक पहुँच नहीं पाती...”

कविता सुनकर रह जाती । कैसे छोड़ दे वह ! किसके सहारे छोड़ दे ! और अचल !

कभी उसका पाँव पकड़ता है, कभी माफी माँगता है और कभी मैना को याचना करता है । लेकिन जब डाक्टर दास दवा और इंजेक्शन लगा देते हैं, उसकी हालत सुधर जाती है कुछ । और तब कुछ-कुछ सबको पहचानने लगता है, किन्तु मैना को भूलता नहीं फिर भी ।

अचल की तबियत खराब देखकर कविता ने चंचल को बुलाने के लिये सेवहों आदमी भेज दिया है और वारिस को भेज दिया है डाक्टर दास को बुलाने ।

थोड़ी देर बाद डाक्टर दास आये । उन्होंने अचल का परीक्षण किया और गंभीर हो उठे ।

“मेरा अनुमान ठीक निकला !”

छैला—२

“क्या डाक्टर साहब !” कविता ने पूछा व्यग्र होकर ।

“जी, कुछ नहीं... इनका ‘ब्लड-टेस्ट’ करना होगा ।” डाक्टर साहब कुछ छिपाते हुए बोले और अचल के बदन से खून लेकर चले गये ।

+ + +

चंचल सेदहाँ से आ गया है । रानी माँ कुँवर की चिन्ता मन में लादे अपने पलंग पर पड़ी हैं । बेचारी अचल के पास हमेशा रहना चाहकर भी नहीं रह पाती । कुँवर की हालत देख-देखकर रोने लगती हैं वे ।

ललित फर्श पर खेल रहा है । और रानी साहिबा गंभीर चिन्ता में पड़ी हैं, जिससे उनके चेहरे की झुर्रियाँ स्पष्ट हो गई हैं । बूढ़ी आँखें लाल होकर सूज गई हैं ।

किसी खटके से चौंक पड़ीं वे । आँखें उठा कर देखा तो सामने चंचल खड़ा मिला ।

“क्या सोच रही हो माँ !” चंचल ने पूछा ।

“एक बात हो तो कहूँ... यहाँ तो भण्डार पड़ा है सोचने के लिये.... सेदहाँ का समाचार नहीं बताया कुछ... आ बैठ न ।” वे उदास चंचल को अपनी वाणी द्वारा समझाना चाहती थीं ।

लेकिन चंचल क्यों बहलने लगा, कोई बच्चा तो था नहीं ।

“एक बात है माँ !... बड़ी भयानक ।” बैठता हुआ बोला चंचल ।

“क्या” चौंक पड़ीं रानी माँ ।

“डाक्टर दास कहते हैं...”

“क्या कहते हैं, जल्दी बोल !” रानी साहिबा व्यग्र हो उठीं ।

“यही कि मैया के खून में साँप का जहर है... बहुत दिनों से, शायद मैना ने सारा विष नहीं चूसा था । विष मस्तिष्क पर चढ़ गया है...” कहा चंचल ने ।

“तो अब क्या होगा रे चंचल !...कोई उपाय कर...दौलत पानी की तरह बहा कर बचा ले अचल को !” रानी साहिबा बालों—“हाँ, देख बहू को यह बात अभी मत बताना...सुन कर क्या गुजरेगी उस पर...गला नहीं दबा लेगी !”

“मुझे मालूम है माताजी !” कहती हुई कविता भीतर चली आई। रानी साहिबा ने चकित होकर देखा कविता के गंभीर चेहरे की ओर। उसकी उस गंभीरता के पीछे कितना भयानक तूफान उठ रहा था, यह तो रानी माँ ही समझ सकती थी। कविता शान्त थी और उसकी पलकें झुकी। आँखों के आसमान में वेदना के बादल घिरे थे, लेकिन पानी नहीं बरस रहा था, सिर्फ बिजलियाँ ही चमक रही थी।

“माता जी आप चिन्ता न करें !...कविता का दिल इतना कमजोर नहीं...वे तो मैना की अमानत हैं, जब तक मेरे पास रहेंगे तब तक अपना जीवन देकर सेवा करूँगी हो...जाना चाहे तो रोकने की शक्ति भी मुझ में नहीं...चाँदनी चार दिन की हंतो है मां ! सपना समझ कर भूल जाऊँगी उन्हें !...मौत का सवेरा होने वाला है माताजी ! जिन्दगी का सितारा डूब जायगा अब !” कहते-कहते कविता के गले में कण्ठा आ बैठी तो चुप हो गई वह।

“मेरी बच्ची !...मेरी बहू !” कहकर रानी साहिबा ने कविता को छाती से लगा लिया—“तू निराश न हो बहू !...अचल की जिन्दगी के पहले इस महल का खजाना लूटा दूँगी...”

“बेकार है मां !...राही अपना सफर काफी तय कर चुका है, मंजिल के पास पहुँच गया है वह। दौलत जिन्दगी की दवा बन सकती है, मौत की नहीं...” थोड़ी देर रुक कर बोली—“अच्छा मैं चली...दवा पिलानी है—समय हो गया है...मुझसे जो हो रहा है कर रही हूँ...आप लोग भी कर गुजरिये !”

छैला—२

कहकर कविता भारी मन, भरा दिल और भरी आंखें लिये बाहर चली गई। रानी साहिबा कविता की सहनशीलता देखकर चकित रह गई। नारी की सहिष्णुता की पराकाष्ठा थी वह।

“मां !” चंचल ने टोका—“भैया को सेदहां ले चलो !”

“क्यों ?”

“भैया के रोग का ईलाज है वहां...तुमसे बताया नहीं मैंने अजीब गांव है सेदहां !” कहने लगा चंचल और मुनने लगी रानी साहिबा।

चंचल ने वहां के दैवी चमत्कार की बात कही तो दंग रह गई रानी मां बोली—“इतने दिन हो गये, यह बात मेरे कानों में नहीं पड़ी।”

“आवश्यकता पड़ने पर ही किसी वस्तु की खोज होती है।....”

“मैं ले चलींगी उसे...जहाँ ठीक हो सके वहीं ले चलींगी।”

इधर सेदहाँ जाने की तैयारी हो गई और उधर अचल बीमारी में बेहोश कभी अपना सर धुनता है तो कभी दाँतों तले उँगली दबा कर काटने लगता है। वारिस और कविता उसे सम्भालते हैं। वारिस जब कभी अपने मालिक के साथ जबरदस्ती करने लगता तो उसका दिल भर उठता।

“मुझे बाहर ले चलो...मेरा जी घबड़ा रहा है...मैना ! मैं मर जाऊँगा सरकार !...मेरी जान लेने से क्या मिलेगा !...आप धनो हैं...आप पर बहुत लोग जान बिछायेगे...मैं गरीब परदेसी हूँ, मुझे माफ करें।” हाँफ-हाँफ कर कह रहा था कुँवर—“मुझे बाहर ले चलो।”

“डाक्टर साहब ने मना किया है हजूर !”

“भाई, मैं हजूर नहीं, गरीब परदेसी हूँ...मुझे बाहर पहुँचा दो भगवान भला करेगा तुम्हारा।” गिड़गिड़ा कर अचल ने वारिस का पैर पकड़ लिया।

“ले चलो वारिस !” कविता ने शान्त स्वर में कहा।

छैला—२

अचल को लेकर वारिस और कविता बाहर आये। अचल मैना के स्मारक के आगे बैठ गया। उसे राहत मिली। उसकी विहल पुतलियां स्मारक को देखते-देखते थक गईं तो वह सर पटकने लगा।

दौड़ कर वारिस ने पकड़ लिया कुँवर को। अचल के सर पर नया घाव हो गया। खून देखकर घबड़ा उठा वारिस।

उसके मुख से निकला— “या खुदा ! क्या गजब करता है तू !”

भीतर आकर पलंग पर लिटाया गया कुँवर को। डाक्टर आया तो बेहोश अचल होश में आया। कविता आंखों में उबड़ा संसार लिये खड़ी थी। रानी साहिबा बदहवास थी।

अचल होश में आया तो उसकी आंखें खुलने लगीं। धीरे-धीरे पलकों के बीच की दूरी बढ़ने लगी। कविता ने देखा—अचल की आंखों में उद्भ्रान्त हृदय की छाया थी। उसका दिल घड़का, लेकिन हिमालय की हड़ता लिये मौन ही रही।

“मैना !” अचल ने इधर-उधर देखकर पुकारा।

मगर कौन जवाब दे। कविता ही बोली—“कहिये !”

अचल ने गौर से कविता की ओर निहारा। बोला—“आप-आप मैना नहीं हजूर !...इस जनम में आप नहीं हो सकती...मेरी मैना दीजिये। गरीब को लूटकर क्या मिलेगा आपको ?”

कविता ने कजेजा थाम लिया सुनकर। उसकी आंखों की राह दिल के टुकड़े मचलने के लिये तैयार थे; किन्तु कविता रोई नहीं। बेवफाओं के लिये आंसू बहाना कहां तक ठीक है।

अचल कहता रहा—

“मुझे मत सतायें सरकार !...मैना मर जायेगी मेरे बिना....सुना आपने !...पुकार रही है वह...अभी आया मैना !...मुझे जाने दीजिये हजूर !” उठकर खड़ा होने लगा वह।

डाक्टर दास और वारिस ने पकड़ लिया । छुटपटा कर रह गया बेवस परदेसी ।

वारिस अचल की अबतर हालत देखकर पागल हो उठा । वह बोल उठा—“या खुदा ! तेरी मेहरबानी !..कैसा इन्साफ किया तूने !... मेरे मालिक ! जिन्दगी नहीं दे सकता तो मौत भी मत दे !”

“अब क्या होगा डाक्टर साहब !” रानी साहिबा की आवाज नहीं मालूम पड़ती थी । लग रहा था जैसे किसी मुँह के मुँह से निकल रहा हो वह स्वर ।

“कुँवर साहब के दिमाग पर जहर चढ़ गया है....याददास्त खो बैठे हैं...इनके मन के खिलाफ कुछ मत कीजिये...” बोले डाक्टर ।

सभी बेचैन हो उठे ।

किन्तु कुँवर परदेसी वैसा ही रहा । एक बार अचल पागल होकर आया था तो मैना ने ठीक कर लिया था उसे । आज पागल हो गया है तो कोई तिनके का सझारा भी नहीं ।

कविता के जीवन का आलोक लुप्त होता जा रहा था । कितनी विवश हो उठी थी वह ।

कुँवर के पास जाती तो ‘हज़ूर, सरकार’ कहकर मैना की भीख मांगने लगता ।

आज अचल को सेदहां ले जाने की तैयारी हो गई है । मोटर साफ हो जाय बस ।

कविता अचल को समझा रही है । पास में ललित भी है । नासमझ ललित समझ नहीं पा रहा है कि आखिर क्यों उसके पिताजी को मां इतना समझा रही है ! और क्यों उसके पिता उसकी मां का पैर पकड़ने को तैयार हो रहे हैं ! चकिताश्चर्य मुद्रा धारण किये देख रहा है वह ।

दवा पिलाने लगी कविता तो—

“हजूर आपके पैर पड़ता हूँ...मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता ...मुझे जाने दीजिये मैंना के पास....आप बड़ी जिद्दी हैं सरकार....कुँवरानी साहिबा !...कहीं ऐसा न हो की जो इज्जत अमीरों के लिये इस गरीब के दिल में है, खो जाय...”

“सरकार ! मोटर तैयार हो गई...कुँवर साहब को ले चलिये ।”
वारिस ने आकर कहा ।

छैला—२

“चलिये मेरे साथ ।” कहा कविता ने ।

सुनकर विभोर हो उठा कुँवर । खुशी से नाच उठा उसका मन । बोला—“आप तकलीफ न करें दजूर ! मैं चला जाऊँगा...आप बड़ी भली हैं...यह आप का बच्चा है न !” ललित को कविता की गोद में देखकर बोला वह—“बड़ा भोला है...बहुत बड़ा हो आपका बेटा यही दुश्मा है इस गरीब की...इससे अधिक दुश्मा क्या कर सकता हूँ...मैना को खोजकर मिलूँगा आप से...”

“चलिये, मैना को मैंने खोज लिया है....उसी के पास तो ले चल रही हूँ ।” कलेजे पर पत्थर रखकर बोली कविता ।

कुँवरानी कुँवर को लेकर बाहर निकली । मैना के स्मारक के समीप आकर अचल रुक गया । बेजान पत्थर के स्मारक को पकड़ कर कलेजे से लगा लिया उसने और लगा चूमने ।

“मैना ! मैना !” पुकारा उसने तो कोई जबाब नहीं मिला उसे ।

“यह मैना नहीं है....वहां है, चलिये ।” कविता ने सजग किया । अचल घुम पड़ा चलने के लिये तभी फाटक से शोरगुल सुनाई पड़ा “परदेसी !” कोई तेज आवाज में चिल्लाया ।

“मैना !” आवाज सुनकर चीख पड़ा परदेसी ।

दौड़ पड़ा फाटक की ओर, मैना से मिलने के लिये मगर पुकारने वाले को देख कर वह जहां का तहां ठिठक गया ।

लोगों ने देखा...एक भयानक सँपेरा पागल-सा खड़ा था फाटक पर । बड़ी-बड़ी लाल आंखों से लपटें निकल रही थीं । वह अचल को घूर रहा था ।

“टिकोरा !” अचल के मुँह से निकला ।

“हाहाहा !...पहचान....लिया...तूने...मैं....आ...गया...तैरा...ग....गला....” लड़खड़ाती आवाज थी टिकोरा की ।

टिकोरा आ गया था अपनी मंजिल पर। और बढ़ रहा था अपने बैरी परदेसी का गला घोटने। किन्तु अचल के पास पहुँचते-पहुँचते छोटी पहाड़ी-सा भयानक सँपेरा गिर पड़ा जमीन पर।

परदेसी का गला पकड़ने के लिये उसके हाथ छुटपटाते रहे। मगर वह तो गिर चुका था। मणिवर साँप का जहर उसके भीतर मौत की जलन पैदा कर चुकी थी। उसकी चलती साँस बन्द होना चाह रही थी।

“पर....देसी....बाबू!....आ....ज....तुझे...दुनि....या....से... उठा...ने आया...या....म....मगर...अफसोस!....टिकोरा...को...तू... ने....फिर....हरा....दिया....आज....हमेशा....के....लिये...” कहकर अपनी साँस सम्हाली, फिर कहता गया—“टिकोरा...ने दुश्मन... को...माफ....करना नहीं....सीखा...मर... कर....भी तेरी....जान.... लूँगा...मेरी.. रुह...तु....भे....तड़पा...कर...मार...डालेगी...समझे....रहना....मैं...टिकोरा हूँ...मैना मैं...ना”

कहते-कहते कुछ कह नहीं सका टिकोरा। मौत ने उसकी जबान पकड़ ली। हवा का तेज झोंका आया और उसका सर जमीन पर लुढ़क गया। मुँह से भाग वह चली।

“मैना!” चीख कर अचल दौड़ पड़ा बाहर की ओर। टिकोरा को कुचलता हुआ।

वारिस ने लपक कर कुँवर को पकड़ लिया। उत्तेजित अचल ने वारिस के हाथ में अपने दांत गड़ा दिये।

चीख पड़ा वारिस मगर छोड़ा नहीं उसने। वफादार नौकर के लिये शारीरिक कष्ट का कोई मूल्य नहीं।

“आओ परदेसी बाबू!...मैना से मिला दूँ तुम्हें!” बोला वारिस और खींचते हुए मोटर पर ला बिठाया विबिस कुँवर को।

किसी प्रकार आकर बैठा कुँवर। मैना से मिलने की लालच दिखाई

गयी तो खामोश होकर बैठ गया ! कविता, चंचल, वारिस और पागल परदेसी कुँवर को लेकर मोटर सेदहों की ओर चल पडी ।

मोटर भागी जा रही थी । अचल विह्वल नजरों से इधर-उधर देखता चल रहा था । किसी राह चलती औरत पर नजर पडती तो मैना-मैना चिह्ला पडता और कूदने पर उतारू हो जाता । लेकिन वारिस के मजबूत हाथ भला अपने मालिक को कैसे छोड़ सकते थे ।

“मैना कहाँ है हजूर !...अभी तक मिनी नहीं !”

“आप चुपचाप चलिये तो...” कविता बहलाती जा रही थी अपने पागल पति को । वह निराश हो गई थी अचल के जीवन से । ना उम्मीदी का दामन धामकर ही चल रहा थी सेदहों ।

“मेरा दिल धड़क रहा है हजूर !...पता नहीं क्यों !...भाई शंकर, जरा तेज ले चलो मोटर...” कहा वारिस ने ।

मोटर सुनसान शहर से दूर की सड़क पर दौड़ रही थी । शहर की आबादी पीछे छूट चुकी थी । अब धूल से भरी देहाती सड़क का सफर आरम्भ हुआ ।

रह रह कर कविता की आँखों के आगे टिकोरा की सूरत नाच उठती थी । सोच रही थी, मैना का क्या किया उसने ! भरी-भरी आँखों से कुँवर को भी देख रही थी । जब कभी कुँवर की आँखों से कविता की आँखें चार हो जातीं तो बच्चे की तरह भयभीत हो उठता वह ।

“शंकर, रोक दो मोटर !...देखो, सड़क पर सो रहा है कोई... खुदा कसम ! जान की कुछ भी परवाह नहीं है सोने वाले को...” चीख पड़ा वारिस ।

शंकर ने हॉर्न दिया मगर उठा नहीं सोने वाला । मोटर रुक गई । वारिस और चंचल खीझकर चल पड़े सोये आदमी की ओर ।

छैला—२

“या खुदा ! कोई जीने के लिये जिन्दगी माँगता है, कोई मरने के लिये मौत !...अजीब है तेरी कुदरत !”

सोये आदमी के नजदीक गया तो चौंक कर दो कदम पीछे हटा वारिस ।

“या खुदा ! क्या गजब करना चाहता है तू !...क्या देख रही हैं वारिस की आँखें !” उसके मुँह से निकला—“देखिए इजूर ! वही है न...विलकुल वही है...”

सोये आदमी को देखकर चंचल भी अचम्भित हो उठा ! बोला—
“इसे उठाओ वारिस !”

वारिस ने सोये आदमी को उठा लिया । सोने वाला हिला तक नहीं । कोई एतराज भी नहीं किया उसने ।

उसे लेकर वारिस मोटर के समीप आया । कविता ने देखा उस अजीब आदमी को तो चौंक पड़ी ।

और कुँवर !

जब उसने देखा तो चीख पड़ा । इतनी तेजी से उछला वह कि कविता सँभाल भी न सकी । दूसरे ही क्षण मोटर के बाहर था वह !

तेजी से वारिस के हाथों के आदमी को छीन लिया उसने ।

“मैना !...मेरी मैना !...” परदेशी चूमने लगा उसे ।

मैना ही थी वह । वह रास्ते में लाते समय पागल टिकोरा को यह भी पता नहीं लगा था की उसकी पकड़ से मैना कब छूट गई ।

कविता देख रही थी दो प्रेमियों का वह मिलन ।

कुँवर मैना को चूमता जा रहा था ।

थोड़ी देर बाद आश्वस्त हुआ तो बोला—“इजूर ! आपका लाख-लाख शुक्रिया !...मुझे मैना मिल गई...आपको बहुत तकलीफ उठानी पड़ी मेरी वजह से । गरीब परदेसी आपका अइसान भूलेगा नहीं...”

छैला—२

मैं वहाँ से बड़ी दूर चला जाऊँगा कि आप फिर मुझे भूल से पकड़ न सकें...मेरी मैना मेरे साथ है सरकार !”

कहता हुआ पागल परदेसी मैना को अपनी गोद में लिये, लड़-खड़ाता भाग चला । कविता देखती रह गई ।

चंचल ‘भैया-भैया !’ चीख कर दौड़ा पकड़ने ।

कुँवरानी सजग हो उठी । वह भी दौड़ी कहती हुई—“वारिस, सम्हालो उनको...देखो, गिर पड़े...उनका दिमाग ठीक नहीं...जहर चढ़ गया है...जल्दी ले चलो सेदहाँ...मैना को भी...हैं भगवान ! मुझ अभागिन पर दया कर...उन्हें और मैना को मेरी जिन्दगी दे...मैं उनकी मौत लेकर ही खुश हो जाऊँगी...”

लेकिन वारिस के पहुँचने के पहले, लड़खड़ा कर कमजोर परदेसी, मैना को लिये-दिये कंकरीली सड़क पर गिर पड़ा ।

बेहोश प्रेमियों को मोटर पर लादा गया ।

मोटर भाग चली सेदहाँ की ओर, न जाने कितने अधूरे अरमानों की धूल उड़ाती हुई ।

×

×

×

दौड़ती हाँफती मोटर लाव-लाव अरमान लादे किसी तरह सेदहाँ पहुँची ।

बड़ी उम्मीद, बहुत उत्सुकता लिये सभी खेलावन बाबा के चौरे पर आये ।

कुँवर के आने की खबर लहर की तरह गाँव में दौड़ गई । ठाकुर भुवसिंह भी आये । कुँवर को कार से बाहर निकाला गया और साथ-साथ मैना को भी ।

दोनों प्रेमी बेहोश थे । चेहरे पर अजीब तरह का दर्द बिखरा था ।

छैला—२

बन्द पलकें मूक भाषा में कुछ कह रही थीं । किन्तु कौन सुनता था उनका मौन सन्देश ?

कविता का दिल अचल की स्थिरता देखकर घड़का । होठ फड़के किन्तु बोली नहीं कुछ ।

कुँवर-और मैना को चबूतरे पर रखा गया ।

दो बुजुर्ग उपचार के लिये ऊपर आये । भीड़ सांस रोक कर फैसला सुनने के लिये आतुर-विकल हो उठी ।

तभी—

भीड़ चीरता हुआ वहां कोई आया ।

आगन्तुक चीख पड़ा—“परदेसो...मैना !”

लोगों ने देखा—कोई जवान सँपेरा था । किन्तु टिकोरा की तरह खूँखवार नहीं ।

वह मैना-परदेसी के पास जाने लगा तो वारिस ने पकड़ कर पीछे खींच लिया ।

गिड़गिड़ाने लगा वह—“मैना हमारे उस्ताद की बेटी है सरकार !...और यह परदेसी !...मुझे मिल तो लेने दो जरा...”

“अभी ठहरो भाई !” चंचल ने कहा ।

दोनों बुजुर्ग कुँवर और मैना का परीक्षण कर रहे थे । कुँवर और मैना की आँखें भीतर धंस गई थीं ! नाड़ी पकड़ी तो गंभीर हो उठे वे । थोड़ी देर बाद ।

दोनों उतर आये चबूतरे पर से ।

बोले—“हम जिन्दगी को जिन्दगी दे सकते हैं सरकार !...मौत को जिन्दगी नहीं दे सकते...”

कविता ने सुना । उसके ऊपर हिमालय भहरा पड़ा, वह स्थिर

छैला—२

रही । पैरों के नीचे की जमीन हिली मगर काँपी नहीं वह । आसमान फटा फिर भी निश्चल ही रही ।

उसके चेहरे की गंभीरता बढ़ चली । धून भरे चेहरे की उदासी गाढ़ी हो गई और अचल आँखों में धूल भोंककर भाग गया ।

उफ ! भाग गया वह निर्मोही परदेसी !

नारी अपनी विवशता पर रोयी नहीं । नारी तो स्वयं आँसू का अगाध कोष है । वह किसे अपना आँसू दिखाये ?

वारिस चंचल बगैरह बदहवाश हो उठे ।

“चलो चंचल!...” कहते-कहते कविता के गले में आँसू अटक गये ।

चंचल ने अपनी भाभी को देखा—वह कुछ समझ नहीं पा रहा था । कविता की उस गंभीरता के पीछे कैसा तूफान उठ रहा था—यह वह जानता था ।

मोटर पर लाशें रख दी गई ।

पास खड़ा सपेरा चीख कर कविता के पैरों से लिपट गया ।

“सरकार ! मैना हमारे उस्ताद की बेटी है...इसे मुझे दे दीजिये.... उसकी जरा भी खिदमत कर सका तो उस्ताद की रुह मुझे आशीरवाद देगी ...”

उसने देखा जवान सपेरा रो रहा था ।

निराश कविता ने उसे निराश नहीं किया । इन्सान मरने के बाद निर्मोही हो सकता है, किन्तु जीते जी नहीं ।

वह सपेरा था छबीले !

उसने मैना को गोद में उठा लिया । कविता ने आदर के साथ मैना के पैर छुए । उसके अरमान पूरे होकर भी अधूरे रह गये ।

मोटर भाग चली अपनी धीमी चाल में । सबकी चाल तो अचल लेकर सो गया था, महानिद्रा की गोद में ।

छैला—२

मोटर पर सवार थे सभी । वारिस परदेसी कुँवर को सम्हाले था ।
कुँवर का सर कविता की जाँघों पर था । चंचल अपनी विद्वित भाभी
को सान्त्वना दे रहा था और भरी-भरी आँखों से देख रहा था, अपने
मृत भाई की ओर ।

और कविता !

उसके चेहरे पर मौत की-सी खामोशी छाई थी । नारी की सहन-
शक्ति की सीमा थी वह । दिल में वेदना का सागर लहराये जा रहा
था मगर आँखों में आँसू का एक कतरा भी—ब्राह्म !

मोटर भागी जा रही थी उजड़े अरमानों की धूल उड़ाती हुई ।
दिन ढल चला था । आकाश धूल से भरा था, उदाम-उदास । उस
निर्जन प्रान्त की धरती गा रही थी और आसमान सुन रहा था, यह
दर्द भरा एकान्त संगीत—

झीनी चुनरिया का भीजेला अचरा,

आँसू से बहे राम नैना के कजरा ।

दिल के दरदिया नहीं कोई जाने,

छैला डाले गलबहियाँ...

रे बेदरदी सइयाँ !

शाम हो गई सूरज डूब गया । पश्चिम से घने आँधरे का भयानक
तूफान उठने लगा ।

मोटर दूर निकल चुकी थी, किन्तु धरती जैसे अब भी सिसक-
सिसक कर गा रही थी । कोई सुने या न सुने, लेकिन उदास आसमान
में ब्यथा का विष अब भी घुल रहा था—

नीचे उठत रे लपट अगिन की

ऊपर बादर की छइयाँ...

रे बेदरदी सइयाँ !

झैला—२

दर्दीली आवाज काँपती रही, अँधेरा बढ़ता रहा और मोटर भागती रही ।

उधर !—

छबीले मैना की लाश सम्हाले छोटी पहाड़ी की ओर बढ़ता जा रहा था ।

मौत जिन्दगी का सहारा लिये थी और जिंदगी मौत का !

मंजिल पर पहुँचने के बाद भी सफर जारी था ।

सफर !—

उफ् !

—बस—

